प्रस्तावना

सामूहिक सुखवृद्धि के लिये उपयोगी आचार विचार को जीवन का सस्कार वना देना, जीवन में उसे मूर्तिमन्त करने के लिये प्रेरित करना धर्म का काम है। व्यक्ति की सुखवृद्धि यदि सामूहिक दु खवृद्धि करनेवाली न हो तो उसे भी सामूहिक सुखवृद्धि का अग कहेगे । इस प्रकार धर्म का मूल रूप निश्चित होने पर भी उसे प्राप्त करने के तरीको में या उसके वाहिरी रूपो में अन्तर है । इसलिये इस वात का निर्णय करना पडता है कि कहा कौन सा रूप उपयोगी है । इसमें कभी कभी उलझनें आजाती है । उन उलझनो को सुलझाने के लिये गुरु की जरूरत होती है ।

दीवानी फौजदारी मामलो का सार इतना ही है कि यदि किसी ने किसी की सम्पत्ति ली है तो उसे दिलादी जाय और यदि किसी ने किसी पर अन्याय किया है तो उसका प्रतिकार किया जाय। वात सरल है परन्तु इनकी उलझनो को सुलझाने के लिये कानून के असाधारण विद्वान जज वकील वैरिष्टरो की जरूरत पडती है।

स्वास्थ्य की यही परिभाषा तो है कि वात पित्त कफ की विषमता शरीर में न रहे, शरीर में कोई विकार या त्रुटि न रहे पर इतनी सीधी वात को समझने और उसे ठीक करने के लिये वडे वडे वैद्य डाक्टर हकीमो की जरूरत पडती है।

इसी प्रकार सामूहिक सुखवृद्धि रूप धर्म को समझने, उसकी उलझने मिटाने के लिये गुरु की जरूरत होती है। यदि गुरु ईमानदारी से पर्याप्त सम्यग्ज्ञान के साथ यह कार्य करता है तो वह आशीर्वाद के समान है। समाज को उसकी वहुत जरूरत है।

परन्तु शताव्दियो से होरहा है उल्टा ही । गुरुवाद की ठगी की दूकानें खुल गई हैं जो ठीक मार्गदर्शन तो नही करती किन्तु धन प्रतिष्ठा लूटने के लिये झूठा गुरुत्व दुनिया पर लादती हैं और दुनिया को गुम-राह करती हैं ।

मनुष्य की यह स्वाभाविक कमजोरी है कि वह कम से कम दाम में अधिक से अधिक चीजें खरीदना चाहता है। उस कमजोरी का उपयोग करके ये ठगी की दूकानें चल रही हैं। धर्म तो पाप दूर करने के लिये है परन्तु इन ठगी की दूकानो में पापो को उत्तेजन दिया जाता है और धर्म करने का भ्रम पैदा करा दिया जाता है और बदले में धन प्रतिष्ठा की लूट की जाती है। इसके लिये झूठे चमत्कारो की कहानिया गढी जाती हैं, ठगने लूटने के कार्यक्रम बनाये जाते हैं। दुर्भाग्य से धार्मिक क्षेत्र ऐसी ही ठगी और लूट से व्याप्त होगया है।

इसका एक और मुख्य कारण यह है कि जो ठगना नही चाहते ऐसे सत्पथ प्रदर्शको का मूल्याकन समाज नही करता इसलिये वे पथप्रदर्शक भी ठग बनजाते हैं। विवशता से बने हुए ऐसे ही एक ठग की आत्मकथा यह अवधूत की डायरी है। इस अवधूत की डायरी से पाठक जानसकेंगे कि ठगी की दूकानें कैसी कैसी चलती है और जिनसे बचने की जरूरत हैं।

इस डायरी में जो ठगी के प्रकार चित्रित किये गये हैं वे कल्पित नही है, वे वास्तविक हैं। किसी किसी के सम्पर्क में मैं स्वय आया हू। बहुत से देखे है और बहुत से विश्वसनीय आधार से सुने और पढे हैं। पुस्तक पढने पर पाठको को भी इस बात का पता लग जायगा कि ऐसी घटनाए दुनिया को ठगने के लिये होती है।

मै चाहता हू कि ऐसी ठगी की घटनाओ से और ऐसे विचारो से धर्म को मुक्त किया जाय। और धर्म का जो वास्तविक रूप है, आचार विचार शुद्धि है उसीको लोग धर्म समझें, उसीका पालन करे, और इस ससार को अधिक से अधिक सुखी बनाने की कोशिश करे।

१३ इगा ११९७२ इतिहास सवत् — सत्यभक्त

२७-७-७२ — सत्याश्रम, वर्धा

—०⁐⁐०—

विषय-सूची

अवधूत की डायरी

१– गुफानिवास

मैं एक विद्वान और सेवाभावी व्यक्ति हू। पर समाज ने न मेरी विद्वत्ता की कद्र की न सेवाभाव की। मै समाज के हित की बात कहता था पर समाज को वह प्राचीनता मोह के कारण प्रिय न मालूम होती थी, इससे समाज मुझ पर नाराज ही रहता। मैं सेवा करता तो भी समाज मेरी सेवा को महत्त्व न देता, सेवा के कारण मुझे वह ससारी या साधारण आदमी समझकर उपेक्षा करता। वर्षो के अनुभव से मुझे पता लगा कि समाज उन्ही की पूजा करता है जो दम्भी है, समाज को ठगते है, लूटते हैं, उसे चक्कर में डालते हैं। शब्दो से तो नही पर कार्यो से समाज का घोषणा वाक्य है कि हमें ठगो, लूटो, धोखा दो फिर पुजो। इसलिये मैंने सोचा कि ऐसे मूढ और पागल समाज की सेवा करना अपने वश की बात नही है। इसे तो ठगना ही चाहिये, लूटना ही चाहिये तब पूजा मिलेगी, जीवन का महत्त्व वढेगा, जीवन सफल होगा। इसलिये मैंने अपना स्थान ही छोड़ दिया। और मैं घूमता हुआ इस गाव के निकट पहुचा जिसके पास मे एक टेकरी है। उसमे ८–१० हाथ लम्बी एक गुफा है। टेकरी की तलहटी में एक छोटीसी नदी बहती है। गर्मी के दिनो में भी नदी में थोड़ा न थोड़ा पानी बना रहता है। इसी स्थान से मैंने अपने अवधूत जीवन का प्रारम्भ किया है। मुझे आशा है कि मै

अवधूत की डायरी

१– गुफानिवास

मैं एक विद्वान और सेवाभावी व्यक्ति हू। पर समाज ने न मेरी विद्वत्ता की कद्र की न सेवाभाव की। मै समाज के हित की बात कहता था पर समाज को वह प्राचीनता मोह के कारण प्रिय न मालूम होती थी, इससे समाज मुझ पर नाराज ही रहता। मै सेवा करता तो भी समाज मेरी सेवा को महत्त्व न देता, सेवा के कारण मुझे वह ससारी या साधारण आदमी समझकर उपेक्षा करता। वर्षों के अनुभव से मुझे पता लगा कि समाज उन्ही की पूजा करता है जो दम्भी है, समाज को ठगते है, लूटते हैं, उसे चक्कर में डालते हैं। शब्दो से तो नही पर कार्यों से समाज का घोषणा वाक्य है कि हमें ठगो, लूटो, धोखा दो फिर पुजो। इसलिये मैने सोचा कि ऐसे मूढ और पागल समाज की सेवा करना अपने वश की बात नही है। इसे तो ठगना ही चाहिये, लूटना ही चाहिये तब पूजा मिलेगी, जीवन का महत्त्व बढेगा, जीवन सफल होगा। इसलिये मैने अपना स्थान ही छोड़ दिया। और मै घूमता हुआ इस गाव के निकट पहुचा जिसके पास मे एक टेकरी है। उसमे ८–१० हाथ लम्बी एक गुफा है। टेकरी की तलहटी में एक छोटीसी नदी बहती है। गर्मी के दिनो में भी नदी में थोड़ा न थोडा पानी बना रहता है। इसी स्थान से मैने अपने अवधूत जीवन का प्रारम्भ किया है। मुझे आशा है कि मै

अपना जीवन पूरी तरह सफल बना सकूंगा। समाजहित की चिन्ता व्यर्थ है।

(२) निष्पृहता की छाप

मैं गुफा मे आकर बस गया हूं। मेरे पास मृगछाला है, कम्बल है, अच्छा मजबूत और बडा चिमटा है, तूमडी का कमण्डलु है। मिट्टी का घडा भी है। इसप्रकार जरूरी सामान सब है। दो तीन दिन चल सके इतनी भोजन सामग्री भी है। मैं शाम को ही यह गुफा देख गया था। साफ कर गया था। फिर रात मे इसी गुफा मे डेरा डाल दिया। भोजन शौच आदि से मैं रात मे ही निपट गया। जब सवेरे कुछ चरवाहे जानवर चराने के लिये आये तब मैं गुफा के द्वार की तरफ़ पीठ करके गुफा के भीतर की ओर मुंह करके बैठा था। ससार से विमुखता बतलाने का यह भी एक तरीका है। जब घंटो तक उनने इसी तरह मुंह फेरे बैठे हुए मुझे देखा तब उन्हे अचरज हुआ। उनने मुझे महान योगी समझा। इसीलिये मुझे छेडने की हिम्मत न हुई। पर उनके लौटते ही गांव मे मेरी शुहरत होगई। कुछ लोग दर्शन को आये। पर उनने गुफा के द्वार पर खडे रहकर मेरी वन्दना की होगी। कुछ भेंट भी चढ़ा गये। मैंने तय किया है कि इस भेंट को अभी हाथ न लगाऊंगा। मेरे पास खाने पीने की सामग्री अभी काफी है। सवेरे जब लोग आयगे और शामको चढाई गई भेंटें ज्यो की त्यो रखी हुई पायगे तब मेरी निस्पृहता की छाप उनपर बहुत ज़बर्दस्त बैठेगी। बेचारी भोली दुनिया! उसे ठगना क्या बड़ी बात

है। वह तो अकर्मण्यता और लापर्वाही को ही त्याग वैराग्य समझ लेती है। परेशानी तो ज्ञानियो और सेवाभावियों की है। अकर्मण्यो, मुफ्तखोरो, ढोगियो को क्या परेशानी! शकुन अच्छा ही हुआ है। कुछ ही दिनमें मैं यहा का देवता बनजाऊगा।

३– ब्रह्मविज्ञान

कई दिनो से गुफा पर भीड लगने लगी है। कभी कभी मैं लोगों को दर्शन दे देता हू। पर अभी तक मेरे ज्ञान की छाप इनपर नही पडी है। मेरे वास्तविक ज्ञान की इन मूढो को कद्र नही होसकती इसलिये अब मैं ऐसे ज्ञान का परिचय दूगा कि बडे विद्वान भी मेरे आगे घुटने टेक दे। और भोली जनता मुझे परमज्ञानी समझने लगे। इसी दृष्टि से मैंने आज एक खेल किया।

मैं थोडी देर को गुफा के बाहर निकल आया था। चारो तरफ भक्त खडे हुए थे। कुछ चरवाहे गाय, भैंस चराने के लिये ले आये थे। मेरे सामने एक भैंस खडी थी। मैंने पूछा यह क्या है? लोगो ने हाथ जोडकर कहा– यह भैंस है महाराज।

मैंने आश्चर्य से कहा– क्या यह भैंस है?

लोग बोले– यह भैंस ही है महाराज।

मैंने पूछा– क्या तुम लोग ब्रह्म को भैंस कहते हो?

लोग बोले– यहा ब्रह्म कहा है? भैंस है।

मैंने कहा– भैंस क्या ब्रह्म नही है? तुम क्या ब्रह्म नही हो। ब्रह्म के सिवाय दुनिया मे है क्या। सब उसी की माया

है । माया को क्या तुम लोग सत्य समझते हो ? असत्य को सत्य समझो तो तुम्हारा उद्धार कैसे होगा ?

मेरी वात का किसी ने उत्तर न दिया । सव मुझे साष्टाग दण्डवत करने के लिये लेट गये मैंने उनकी पर्वाह नही की और गुफा मे चला आया । वे लोग गुफा के द्वार की धूल माथे से लगाते रहे ।

इन भोले प्राणियो को चकमा देना, इनसे पूजा प्रतिष्ठा वसूल करना, इनके सामने वड़ा से वडा ज्ञानी वनजाना कितना सरल है । इन्हे सच्ची राह वताने की, इनके जीवन की समस्याए सुलझाने की, इन्हे समझदार वनाने की मूर्खता कौन करेगा ? ये ठगे जाकर और लुटकर ही तो पूजा प्रतिष्ठा देते हैं, मै इसी तरह इन्हे लूटूगा । जानवरो को जानवर समझकर जोतना चाहिये । उन्हे आदमी वनाने की कोशिश वेकार तो है ही, साथही अपने मतलव की भी नही है ।

४– सिद्ध साधक

धीरे धीरे मेरा प्रभाव फैलता जारहा है । काम वढता जारहा है । अव एक साधक की जरूरत है । सिद्ध साधक की जोडी विना अच्छी तरह काम नही वनता । फिर दुनिया को ठगने के लिये तो इसकी सख्त जरूरत है ।

आज एक तरुण आया । इस गाव में किसी के यहां मेहमान था । वस्ती के लोग आते थे उनके साथ यह आता था । दो तीन वार आकर इसने वहुत कुछ समझ लिया । रात मे जव सव लोग चले गये तव यह एकान्त में मुझसे वोला – गुरुदेव, मै आपकी शरण मे आना चाहता हू ।

मैंने कहा– अच्छा बच्चा, तुम हो कौन ? कहां रहते हो, क्या करते हो ? घर मे कौन है, शिक्षण कहां तक हुआ।

मालूम हुआ मेट्रिक फेल है, घर मे अकेला है, चतुर चालाक भी है । मैंने पूछा– तुम करोगे क्या ?

बोला बहुत कुछ करुगा गुरुदेव । छोटी बडी सब सेवाएं तो करूगा ही, साथ ही वह काम भी करूगा जो आप नहीं कर सकते ?

मैंने चकित होकर कहा– ऐसा कौन सा काम है जो मैं नही कर सकता और तुम कर सकते हो।

वह मुसकराते हुए बोला– ऐसा काम नही ऐसे काम गुरुदेव, ऐसे काम एक नहीं अनेक हैं।

मैंने कहा– जैसे ?

वह बोला– आप अपनी प्रशसा अपने मुह से कैसे कर सकते है वह मै ही कर सकता हू। आप ऊटपटाग कुछ बोलें कुछ भी इशारा करे उसका ऐसा अर्थ लोगो को बताना जिससे आपकी भविष्य वाणी सच्ची सिद्ध हो यह कार्य की परिस्थिति देखकर मै ही कर सकता हूं । लोगो को सकट दूर करने के लिये आपकी सेवा दान पूजा के लिये प्रेरित करने का काम भी मै ही ठीक ढग से कर सकता हूं। पूजा पाठ अनुष्ठान के मन चाहे फल बताना लोगो को भ्रम जाल मे डाले रखना, और आपको निस्पृहता के गीत गाकर भी उन्हे अधिक से अधिक भेट पूजा के लिये प्रेरित करना जिसमें उनका पाप कट जाय आदि योजना मै ही लोगो कें सामने पेश कर सकता हू । और भी बहुत से काम हैं जो समय आनेपर किये

जा सकते है । दुनिया को अपनी इच्छा के अनुसार नचाने के लिये साधक परमावश्यक है ।

मैंने कहा– जरूर है। और तुम इसके लिये बहुत योग्य हो । तुम काफी चतुर चालाक हो ।

युवक– सब आप लोगो की दया है गुरुदेव ।

मैं– क्या तुम मुझ सरीखे और लोगो के भी साधक रह चुके हो ?

युवक– पूरी तरह साधक तो नही बना पर इस काम की उम्मेदवारी जरूर की है। पर और साधको ने जमने नही दिया इसलिये उखड़ आया । पर अनुभव बहुत कर लिया है ।

मैं– जितना हुआ उतना काफी है । बाद में तो अपने आप अनुभव का भडार भरता ही जायगा। पर एक बात का ध्यान रखना कि मुझे धोखा न देना।

युवक– गुरुदेव, दुनिया को धोखा देनेवाले लूटनेवाले डाकू भी आपस में धोखा नही देते । आपस मे धोखा देने लगें तो वे दुनिया को धोखा न दे सकेगे । कही न कही ईमानदारी हुए बिना तो बेईमानी का भी कारबार नही चल-सकता । इसलिये एक बार में परमार्थ की उपेक्षा भी कर जाऊ, पर स्वार्थ के लिये भी आपके प्रति वफादार रहना जरूरी हैं।

मैं– बहुत समझदार हो, अनुभवी हो। पढे लिखे कम हो तो क्या हुआ पर तुमने दुनिया काफी पढी है। बस, अब कल से अपना काम सम्हाल लो । अब तुम मेरे चेले हो। मैं मायाराम हु । आज से मै तुम्हे मायादास कहकर पुकारा करूगा ।

युवक– वहुत ही सार्थक और उपयुक्त नाम है गुरुदेव।

यह कहकर वह खिलीखलाकर हसने लगा। मै भी मुस-कराने लगा।

मायादास का मिल जाना वहुत भाग्य की बात है।

रात मे वडी देर तक बाते होती रही फिर सो गये। मायादास के मिलने की प्रसन्नता तथा उसके विषय मे विचार के कारण नीद कुछ देर मे आई, पर आगई ॥

मायादास मुझसे कुछ पहिले ही उठा। साफसफाई की, शारीरिक कृत्यसे निवृत्त हुआ। मै भी निपट गया। फिर उसने कहा– अब आप ध्यान लगाकर बैठ जाइये। लोग आने वाले है।

थोडी देर मे लोग आगये। सब को इसने शान्ति से बैठाया। कहा– आप लोग शान्ति से बैठे। अभी गुरुदेव समाधि में हैं। शाम ही को वे समाधि मे बैठ गये थे। समाधि टूटने पर दर्शन होगे और गुरुदेव सबकी मनोकामना पूरी करेगे।

५– भविष्यवाणी.

अधिकाश लोग मेरी वन्दना करने आये थे और कुछ लोग अपने मतलब की बात पूछने आये थे। एक की पत्नी गर्भवती थी, वह जानना चाहता था कि उसके लडका होगा या लडकी ? दूसरे ने सट्टे पर दाव लगाया था जानना चाहता था कि कोनसा अक आयेगा। पर मै ने समाधि का स्वाग ले रखा था, इस समय बात नही कर सकता था।

मायादास ने कहा– गुरुदेव तो समाधि मे है। समाधि मे वे किसी की वात सुन नहीं सकते पर तुम को लडका

होगा या लडकी यह वात मे ध्यान लगाकर गुरुदेव के ध्यान में लाता हूं और सट्टेके अंक की वात भी ध्यान लगाकर गुरु-देव के ध्यान में लाता हू । गुरुदेव के मुह से जो भी उद्-गार निकल जाये उन्ही पर से अपना उत्तर समझ लेना चाहिये । जब तुम्हे सन्तान पैदा होजाय तब तुम उस उद्‌गार की सचाई समझ जाओगे । इसी प्रकार जब तुम्हारा अंक निकल आयेगा तब तुम भी सचाई समझ जाओगे ।

मैं- मायादास की वाते सुन ही रहा था । थोडी देर में मैंने जोर से आवाज निकाली 'लडक' सब लोग चौंके। सब सोचने लगे सन्तान पैदा होने का भविष्य गुरुदेव ने वता दिया । थोडी देर वाद मैंने जोर से आवाज निकाली 'समझो'। मायादास ने कहा गुरुदेव ने अंक भी वता दिया । कल तुम्हें इसकी सच्चाई मालूम पड़जायगी ।

इसके वाद मायादास ने कहा- गुरुदेव परम निवृत्त हैं वे किसी ससारी वातों में नही पडते । तुम्हारे क्या सन्तान होगी और तुम्हारे सट्टे का क्या अंक निकलेगा ऐसी वातों से गुरुदेव को क्या मतलब । वे इच्छापूर्वक ऐसी वातो का उत्तर देते ही नही, परन्तु परोपकार उनका स्वभाव वनगया है इसलिये इच्छा न होनेपर भी कुछ उद्‌गार उनके मुह से निकल जाते हैं । उनमें सारा सत्य भरा रहता है । वस, सम-झनेवाले मे बुद्धि चाहिये ।

मायादास ने भूमिका अच्छी वाधी थी । इससे भविष्य मे घटनाए कुछ भी हों उनकी सगति मेरे उद्‌गारो से बैठाने में सुभीता होगा ।

मायादास लोगो को कुछ उपदेश और देता रहा। फिर सब लोग अपने अपने काम से चले गये। शक्ति के अनुसार भेट भी देते गये।

जब सब चले गये तब मायादास ने मेरे पास आकर कहा– अब सब चले गये गुरुदेव !

मैने आखे खोली, मायादास को देखकर मुसकराया। और उसके कधे पर हाथ रखकर शाबासी देने के स्वर मे कहा– आज तुमने अच्छी भूमिका बाधी मायादास ! अब इन उद्‌गारो के विषय मे सोचलो कि कल इनका क्या खुलासा करना है ।

मायादास ने कहा– यह बहुत जरूरी है गुरुदेव। मै भी कुछ सोच रहा हू फिर भी आपने जो सोचा हो वह बतलाइये ! उसके अनुसार ही कल खुलासा किया जायगा।

मैंने कहा– सन्तान के बारे मे मैंने 'लडक' कहा है। यदि लडका हो तब तो लडक का अर्थ लडका साफ ही रहेगा। कदाचित लडकी हुई तब तुम कहना–गुरुदेव समाधि मे किसी नारी को ध्यान मे नही आने देते, इसलिये उनके मुह से उस समय ई नही निकल सकती । इसलिये लडकी मे से ई निकाल देने पर 'लडक' ही बचता है वही गुरुदेव ने कहा है । लड़का न कहकर लडक कहा इसका मतलब ही यह है कि लडकी मे से ई निकल गई है। यदि सन्तान नष्ट होजाय गर्भपात होजाय विकलाग हो तब कह देना कि इसीलिये गुरुदेव ने लडक कहा था क्योकि न पूरा लडका पैदा होने–वाला था न पूरी लड़की, सब अधूरा ही मामला था इसलिये

'लड़क' कहा ।

मायादास– यह तो वहुत अच्छा खुलासा रहा गुरुदेव ! "चित्त मेरी पुट्ट मेरी, अटा मेरे वापका,, हर हालत मे अपनी जीत है । अव सट्टे का अक का क्या समाधान होगा ?

मैने कहा था– 'समझो, इसी में से अक का अर्थ निकाल लेना चाहिये । समझो का अतिम स्वर 'ओ' है जो नवमा स्वर है। ओ पर जोर देने से नव समझा जायगा। झ भी नवमा व्यजन है इसलिये भी नव समझा जायगा ।

मायादास– अगर आठ अक आया तो ?

मैं– तो कह देना कि झ नवमा व्यजन है ओ नवमा स्वर है, दोनो को मिलाकर १८ होते हैं। इसमें अतिम अक आठ हुआ । सट्टे के अंको में अतिम अक ही माना जाता है इसलिये 'समझो' से ८ का अक ही समझना चाहिये ।

मायादास– यदि सात आया तो ?

मैं– 'समझो' मे तीन व्यजन है और चार मात्राए है इसप्रकार कुल ७ वर्ण हुए इसलिये सात का अंक समझना चाहिये ।

मायादास– यदि छह अक हुए तो ?

मैं– तव भी सीधा अर्थ है स, म, झ, तीन व्यजन, और अ, अ, ओ तीन स्वर, कुल मिलाकर छह हुए ।

मायादास– यदि ५ का अक आया तो ?

मैं– कह देना कि जव गुरुदेव के मुह से उद्गार के रूपमें कोई शब्द निकलता है तो बीच का अक्षर अकसूचक होता है। समझो मे 'म' वीच में है जो ५ वा व्यजन है

जिसके मध्यमे ५ का अक है इसलिये ५ समझना चाहिये।

मायादास– अगर ४ का अक हुआ तो ?

मै– 'समझो, मे चार मात्राए है इसलिये चार समझना चाहिये।

मायादास– यदि तीन का अक आया तो ?

मै– 'समझो' मे तीन स्वर है इसलिये तीन समझना चाहिये। झो पर जोर है और झो मे दो मात्राए है इसलिये दो समझना चाहिये और समझना आत्मा का प्रथम गुण है इसलिये एक समझना चाहिये। इस प्रकार सट्टे का अक कुछ भी आये तुम्हे उसकी उपपत्ति बैठाकर लोगो का समाधान कर देना है।

मायादास– बहुत अच्छी तरकीब है! पर इससे सिर्फ मूर्खो को ही सन्तोष होगा, समझदारो को तो सन्तोष शायद ही हो।

मै– पर अपने पास मूर्ख ही तो आयेगे। समझदार अपने से सट्टे का अक पूछने की मूर्खता क्यो करेगा ? भलेही कोई पढा लिखा हो पर हमे जो त्रिकालदर्शी चमत्कारी समझता है वह मूर्ख नही तो क्या है।

मायादास– बिलकुल ठीक कहा गुरुदेव।

इस प्रकार मायादास को योजना समझादी है। अब वह सब को अच्छी तरह मूर्ख बना सकेगा।

६– सस्थान

पिछले वर्षो मे सिद्ध साधक के सहयोग से लोगो को खूब ठगा जा सका है। जनता मुझे सर्वज्ञ और सिद्ध पुरुष

समझती है। अब यह काफी बडा सस्थान बना गया है । जिस गुफा मे मै रहता था वह काफी लम्बी कर दी गई है। और जहा लम्बाई खतम हुई उनके दोनो तरफ खुदाई हुई और उसमे कक्ष निकाले गये । इस प्रकार अब गुफा अग्रेजी के 'टी' के आकार की बन गई है । सौभाग्य वश एक तरफ खोदते खोदते टेकरी के ढाल की तरफ द्वार बन गया। इससे बडा लाभ यह हुआ कि गुफा के मुख्य द्वार से हवा आकर इस पिछले द्वार से निकल जाती है। इससे गुफा स्वास्थ्य के लिये भी अच्छी बन गई है । गुफा मे सामने तो मैने एक तख्त पर अच्छा गद्दा विछाकर ऊपर से मृगछाला विछा दी है उसी पर मै बैठता हू और वही बैठता हू जहा पहिले बैठता था। गुफा की जो लम्बाई बढी है और दोनो ओर जो कक्ष बढे है वहा किसी को नही जाने दिया जाता। वहा मेरा शिष्य ही जाता है। जो महिलाए मेरी बहुत भक्त होती है वे भी जासकती है। बाकी जनता के लिये वहा फटकने भी नही दिया जाता ।

अब मेरा नाम चारो तरफ फैलगया है यात्री लोग दर्शन के लिये और अपनी कामना की पूर्ति के लिये आने लगे है । इसलिये गुफा के बाहर काफी बडा मैदान छोडकर धर्मशालाए बनगई है। यात्री लोग ठहरने लगे है । इसलिये छोटी मोटी दूकानें भी आगई है। यहा एक बडासा जनरेटर लगा दिया गया है इसलिये गुफा के भीतर बिजली पहुच गई है, पखे पहुच गये है। इसके सिवाय सस्थान में भी हर कक्ष में और मैदान मे बिजली लगगई है । जन धन वैभव ठाठ,

प्रतिष्ठा और विलास की कोई कमी नही है।

सोचता हू यदि मै सत्य का पुजारी बना रहता, जनता का हितैषी बना रहता, उसकी रुचि के अनुसार नही उसके हित के अनुसार बात करता और काम भी करता तो मुझे कौन पूछता। जिन्दगीभर मे शायद दस बीस विवेकी ज्ञानी शिष्य मिलजाते पर वे भी इतने समर्थ न होते कि सादगी से गुजर करने पर भी मेरा आर्थिक भार सम्भाल पाते। और अपने काम मे सहयोग के लिये आदमी तो मै रख ही न पाता।

सच्चाई के गीत गाता हुआ जनहित के ध्यान मे पाग-लसा बनकर गरीबी मे जीवन गुजारता। एक बार मै इसके लिये भी तैयार था। सोचता था कि किसी तरह पेट के लिये रूखासूखा मिले तो भी पर्वाह नही पर जनता इस सच्चाई की कद्र करे, प्रतिष्ठा करे तो मै यह गरीबी भी सहजाऊगा। पर जनता आध्यात्मिक क्षेत्र मे भी गरीबी की कीमत करने को तैयार नही थी। वह आध्यात्मिक दृष्टि से भी उन्हे ही महान समझती है जिनके पास जन धन वैभव ठाठ बाट होता है। ऐसी हालत मे मै सत्य का भक्त और जनहितैषी बनने की मूर्खता क्यो करता।

जब जनता यही चाहती है कि जो उसे ठगेगा, उसे गुमराह करेगा उसी की वह पूजा करेगी तब क्या मेरी अक्ल घास चरने गई थी कि मै जनहितैषी ईमानदार बनजाता और जनरुचि के विरुद्ध जाकर कगाल और तुच्छ बना रहता।

जनता जहन्नुम मे जाती हो तो जाय, मुझे अपने से मत-लब। सो मै लाभ उठा रहा हू और उठाता रहूगा। परमात्मा

को तो किसने देखा है पर दुनिया की दृष्टि मे मेरा जीवन सफल हैं ।

७– ठगी का विस्तार

मैने सभी तरह के कार्यक्रम अपना लिये हैं । रामायण गीता और वेद का पाठ समय समय पर होता रहता है। यज्ञ होम का क्रियाकाड भी होता है । भजन गीत भी होते है । नामजप का कार्यक्रम भी होता है । भूत प्रेत उतारने का इलाज भी होता है, पापियो का पाप ईश्वर से क्षमा कराने के लिये भी अनुष्ठान होते है। यो तो सभी तरह के क्रिया-काड पाप माफ कराने के लिये है। सट्टे के अक बताये जाते हैं । भविष्य वाणी की जाती है। रास लीला भी बडी सफलता के साथ होती है, बीमारी आदि दूर करने के लिये पवित्र जल दिया जाता है। स्त्रिया बच्चे के लिये आती है। उसके-लिये यज्ञ किये जाते है । यज्ञ प्रसाद के नाम से बच्चे पैदा करा दिये जाते है। लोग ऐसी बातो पर विश्वास भी कर लेते है । और क्यो न करे । जब दशरथ जी के पुत्र यज्ञ-प्रसाद से पैदा होगये तब सन्देह की गु जाइश कहा है ।

इस तरह मेरा कारबार खूब जमगया है । हर तरह सफलता ही सफलता है । दुनिया झुकती है, झुकानेवाला चाहिये ।

८– साधिकाए

भूत उतारने का कारबार अब जम गया है । प्रारम्भ मे जरूर इसमें कुछ पूंजी लगाना पडी पर अब उसकी जरूरत प्राय' नही पड़ती। शुरु में मायादास ने ही एक स्त्री

को तैयार किया था कि वह हर हफ्ते भूत आने का नाटक किया करे । नाटक किस प्रकार किया जाय, किस भूत का नाम लिया जाय, भूत की कहानी क्या सुनाई जाय आदि सब बातें मायादास ने उस बाई को सिखादी थी और कह दिया था कि जिस दिन तू यह नाटक करेगी उस दिन की मजूरी के रूप में तुझे तीन रुपये मिलेगे । और जिस दिन तुझ पर से भूत उतारने का नाटक किया जायगा उसदिन तुझे चार रुपये मिलेगे । चार हफ्ते में चार बार उसने यह नाटक किया और उसे १२) रु दिये गये । पाचवे हफ्ते उसका भूत उतार दिया गया । उस दिन उसे ४) रु देना पडे इस प्रकार १६) रु की पूजी से यह धधा खडा किया गया । अब तो इसमें हजारो की आमदनी है । खर्च निकालकर भी काफी वचत होजाती है ।

मेरे हर कारबार का मुखिया मायादास ही है । पर अकेला मायादास तो ये सब कार्य कर नही सकता । मैंने उसकी सलाह से और भी चेले वना लिये हैं । कुछ चेलिया भी आगई है । रुक्मिणी और किशोरी नाम की दो चेलिया मुख्य है । दोनो विधवा वहिने है । बहुत सुन्दर है । पर समाज न इन्हे विवाह करने देता है न इनके निर्वाह की कुछ व्यवस्था है । हा ! राह चलते छेडनेवाले बहुत है । पर समाज उनसे भी उनकी रक्षा नही कर पाता । इस तरह इनका जीवन घोर सकटपूर्ण था, दयनीय था ।

सो मायादास को इन पर दया आगई । और मायादास के कहने से मुझे भी दया आगई । और मैंने इन्हे अपने यहा नियुक्त कर लिया ।

इसमे सन्देह नही कि ऐसी युवतियो की शादी न करने देना, या उनकी शादी की व्यवस्था न करना हिन्दू समाज का अन्याय है। पर अब मै भी विधवाविवाह का विरोधी होगया हू। क्योकि समाज यदि विधवाविवाह का विरोधी न होता तो ऐसा माल हमे कहा मिलता। इसलिये विधवाविवाह का निषेध भले ही अन्याय हो पर मै तो अब उस अन्याय के समर्थन मे हू। विधवाविवाह का निषेध करके मै प्राचीन शास्त्रो की आज्ञा का पालन करता हू, समाज के सामने धर्म-रक्षक के रूप मे चमकता हू और इसी पुण्य के प्रताप से रुक्मिणी सरीखा नारीरत्न पागया हू। जो मुझे अर्थ और काम दोनो पुरुषार्थो की दृष्टि से उपयोगी है। रहा धर्म, सो ऐसी अनाथ स्त्रियो को सनाथ बना देना, सम्पन्न और सुखी बना देना कम धर्म नही है। अब रहा मोक्ष, सो परमानन्द ही मोक्ष है। और ऐसी सुन्दरियो के सम्पर्क से बढकर परमानन्द और क्या होगा! सो मोक्ष भी है ही।

रुक्मिणी और किशोरी दोनो हम दोनो के लिये प्रेयसिया है। किशोरी मायादास की प्रेयसी है और रुक्मिणी मेरी। पर इन दोनो से एक बात साफ कर दी गई है कि तुम दोनो का जो स्थान है वह स्थायी है। पर इस कार्रवाई मे अस्थायी सम्बन्ध भी करना पडते हैं। बच्चे मागने के लिये जो स्त्रिया आती है उन्हे भी कभी कभी एक रात देनी पडती है। इसमें तुम लोगो को इतराज न होना चाहिये। क्योकि यह प्रेम की बात नही, धधे की बात है। प्रेम तो तुम्ही से है। ऐसा भी होसकता है कि कुछ और भक्तिने आजाये जो

अपने सस्थान की तरक्की के लिये उपयोगी हो तो उनसे भी कुछ सम्बन्ध रखना पडेगा इसमे तुम्हें इतराज न होना चाहिये। श्री कृष्ण जी तो सोलह हजार रानिया रखते थे। पर इसमें किसी को इतराज नही था। भगवान ने पुरुष के ऊपर यह जिम्मेदारी डाल दी है जो उसे उठाना पडती है, सो वह उठायगा, इसमे नारियो को इतराज न होना चाहिये। हा! इतना मै कहता हू कि तुम तो मेरी रुक्मिणी हो। सोलह हजार के सम्पर्क में भी श्रीकृष्ण के यहा रुक्मिणी का स्थान नही छिना, तो मेरा सम्बन्ध यदि सैंकडो से होजाय तो भी तुम्हारा स्थान न छिनेगा।

रुक्मिणी और किशोरी दोनो समझदार हैं, उदार हैं दोनो ने इस बात को मंजूर कर लिया। बल्कि यह भी कहा कि सस्थान की उन्नति के लिये हम लोग समय समय पर स्त्रियों को फासफासकर लाया करेगी। मैंने बहुत प्रसन्नता प्रगट की।

रुक्मिणी को मैंने साध्वी के फैशन मे सजाया। उसके लम्बे लम्बे मुलायम बालो की वेणी नही लटकायी जाती, जूडा भी पीछे नही बनाया जाता। सिर पर मुकुट की तरह उसकी वेणी बनाई जाती है और उसके चारो ओर सुन्दर गुलाब के फूलो की माला लिपटी रहती है। उसकी चोली रेशमी है और अच्छे चटकदार केशरिया रग की है। साडी भी ऐसी है। उसके शरीर पर और कोई आभूषण नही है। एक मणियो की कीमती माला उसके हाथ मे रहती है। जिसपर उगली चलाकर वह जप करती है। और जब जप नही करती

तव गले मे पहिन लेती हे । इस प्रकार वह मणिमाला जप का साधन होने से धर्म है, कीमती होने से अर्थ है । और उसका सौन्दर्य वढा देती है इसलिये काम है । तीन्नो पुरुषार्थो का अवतार है। उसके रूप का, उसके वेप का, उसकी चेष्टाओ का जनता पर वडा प्रभाव पडता है। इसलिये भी दर्शनार्थियो की भीड वढती जाती है। दुनिया तो दुनिया है। चाहे वाराणसी की दालमंडी हो चाहे विश्वनाथ जी का मन्दिर, उसकी नजर मे कोई फर्क नही पडता । सत्य शिव सुन्दरम् की साधना मे वह सत्य शिव की सीढी लाघकर इकदम सुन्दरम् पर पहुच जाती है। लोगो की दृष्टि को सत्य शिव की सीढी न लाघना पडे इसलिये मैंने उन्हे हटा ही दिया, इकदम सुन्दरम् को सामने कर दिया है ।

एक दिन मैंने रुक्मिणी से कहा – तुम्हारे गले में मणिमाला जव पडजाती हैं तव समझना मुश्किल होता है कि मणिमाला से तुम्हारी शोभा वढी हे या तुमसे मणिमाला की शोभा वढी है । परन्तु जव तुम मणिमाला हाथ मे लेकर जप का प्रदर्शन करती हो और गुलाव की पखुरियो के समान कोमल उगलियो से मणियो को सौभाग्यशाली वनाती जाती हो तव किसका जाप करती हो ?

रुक्मिणी– इस व्रह्माड के नायक नायिका को छोडकर और किसका जाप करूगी ?

मै– तुम्हारी दृष्टि मे कौन हैं व्रह्माड के नायक नायिका ?

रुक्मिणी– इस व्रह्माड की नायिका है माया और इस व्रह्माड के नायक है राम, सो मायाराम ही जपती हू ।

मैंने प्रसन्नता के आवेग में उसे छाती से ही नही लगा लिया पर उसके दोनो कपोलो पर दो चुम्बनो का इनाम भी दे डाला।

पर रुक्मिणी गौरवशालिनी है वह मेरे इनाम का ऋण क्यो रखने लगी, उसने भी मेरे कपोलो का चुम्बन कर अपना ऋण उतार दिया।

धर्म का फल परलोक में कैसा मिलता होगा कौन जाने पर मेरा धर्म तो इसी जन्म मे ऐसा फल फूल रहा है कि जीवन उस से लद गया है।

९– महाकाली से मुक्ति

रुक्मिणी को अब सब लोग देवी जी कहते है। तीसरे पहर उनके पास स्त्रियो का जमवट लगा रहता है। तरुण स्त्रिया ही अधिक आती हैं। देवी जी उनके दुखदर्द सुनती हैं और उनका कुछ उपाय भी बताती हैं। एकान्त में मुझसे भी सलाह लेलेती हैं। इसका एक प्रसिद्ध उपाय है भूतावेश।

आज एक युवति आई थी। उसने कहा मेरी सास मुझे बहुत तग करती है। घर के और लोग भी परेशान करते हैं। मै जिन्दगी से तग आगई हू। पति मारपीट करता है। सास बुरी बुरी गालिया देती है। कभी कभी मार भी देती है। इस घर से कैसे छुटकारा मिले या इस सकट से कैसे छुटकारा मिले इसी का उपाय पूछने आई थी।

रुक्मिणी ने कहा– गुरुदेव की कृपा से उपाय तो होजा–यगा पर उसके लिये गुरुदेव के विषय में श्रद्धा चाहिये, भक्ति चाहिये।

युवति– श्रद्धा भक्ति तो है । इसीलिये तो यहा तक आई हू ।

रुक्मिणी– ठीक जगह आई हो । इस जगह को छोडकर और कही भी तुम्हारी समस्या हल नही होसकती । पर अपनी श्रद्धाभक्ति गुरुदेव के सामने प्रगट करना चाहिये ।

युवति– तो मुझे गुरुदेव के दर्शन करा दीजिये देवी जी । क्या इस समय गुरुदेव के दर्शन होसकेगे ?

रुक्मिणी– इस समय गुरुदेव के दर्शन का समय नही है । परन्तु तू इतनी दूर से ऐसे घरवालो के बीच मे रहते हुए बार बार यहा आने का समय तो निकाल नही सकती, इसलिये मै किसी तरह गुरुदेव का दर्शन करा दूगी परन्तु तेरी श्रद्धाभक्ति गुरुदेव तक पहुच सकेगी कि नही, पुकार पर उनका ध्यान जासकेगा कि नही कह नही सकती । यदि गुरुदेव असम्प्रज्ञात समाधि में हुए तब तो कुछ नही होसकता । यह समाधि समय के पहिले किसी भी तरह टूट नही सकती । हा ! यदि सम्प्रज्ञात समाधि मे हुए तो किसी के कल्याण के लिये इस समाधि को भग किया जासकता है । हालाकि है वह भी बडे जोखिम का काम । फिर भी तेरे लिये यह जोखिम भी उठाना ही होगा ।

युवति– आपकी कृपा के बिना मेरा उद्धार नही होसकता देवी जी !

रुक्मिणी– सब गुरुदेव की कृपा है, मै तो निमित्त मात्र हू । खैर ! मै जाती हू ।

रुक्मिणी मेरे पास आई । उसने सारी घटना मुझे सुनाई ।

मैंने आगेके लिये सारा कार्यक्रम उसे समझा दिया। वह फिर अपने कक्ष में चली गई। उसने उस युवति से कहा– तेरा भाग्य है बेटी, गुरुदेव इस समय सम्प्रज्ञात समाधि मे ही थे। इस समाधि मे मै अपने ध्यान के द्वारा उन तक अपने सन्देश भेज सकती हू। सो तेरी सारी हकीकत मैंने उनके ध्यान में लादी है। अब तू उनके दर्शन कर। उस समय देखे क्या उद्गार गुरुदेव के मुह से निकलता है। उससे पता लगेगा कि क्या करना चाहिये। पर जगत के इतने महान अवतारी पुरुष के सामने खाली हाथ न जाना चाहिये। सोचले इसके लिये कुछ तैयारी है कि नही।

युवति– देवी जी। मै इस तैयारी से तो आई नही थी और तैयारी भी क्या करती। मेरे हाथमे कुछ रुपया पैसा तो आ नही सकता। और न बार बार आना बनसकता है इसलिये जो कुछ करना है अभी करना है। मै अपने गले की यह एकदानी, जो तीन तोले की है, गुरुदेव की सेवा मे अर्पित कर दूगी।

रुक्मिणी ने कहा– आभूषण का तो गुरुदेव क्या करेगे। हा! वह भण्डार में जमा होजायगा जो भगवान की सेवा के काम मे आयगा। पर इतनी जल्दी क्या है। तू अभी चली जा! फिर कभी कुछ तैयारी से आना। उस समय गुरुदेव यदि असम्प्रज्ञात समाधि मे न हुए तो फिर दर्शन करादूगी।

युवति– मै बार बार नही आसकती देवी जी, और न कोई खास तैयारी कर सकती हू। फिर आनेपर यदि गुरुदेव बडी समाधि में हुए तो क्या होगा। जो कुछ करना है अभी करना है।

रुक्मिणी– अच्छी बात है । जिसमे तुझे सुभीता हो वही कर, पर एकदानी के विषय मे घरवालो को क्या जवाब देगी ?

युवति– कुछ दिन तक तो पता ही न लगने दूगी बाद मे किसी निमित्त से गुमने का बहाना बनाऊगी । घरवाले तो यो ही जान लिये लेते हैं अब और क्या लेगे ।

रुक्मिणी– खैर ! तब तक तो जान लेनेवाली परिस्थिति न रहेगी । गुरुदेव की कृपा से सब ठीक होजायगा ।

युवति–बस ! गुरुदेव की कृपा चाहिये देवी जी ।

रुक्मिणी– उसके लिये तो मै कोशिश कर ही रही हूं । अच्छा, अब चलो गुरुदेव के दर्शन करलो ।

रुक्मिणी उस युवति को लेकर गुफा मे आई । गुप्त सकेत से उसके आने की खबर मुझे पहिले ही मिलगई थी । और मै तुरत समाधि मे आगया था । उसने मेरी वन्दना की । उसके आने का समाचार और उसकी याचना की खबर मुझे समाधि अवस्था मे भी मिलजाय इसलिये रुक्मिणी ने भी ध्यान का आडम्बर किया । और थोडी देर मे ही मेरे मुह से उद्–गार निकल गया 'जगदम्बा कालिका' । रुक्मिणी ने चौकने का अभिनय किया और मुझे साष्टाग दडवत की । फिर युवति से बोली । बेटी, गुरुदेव तक मेरी प्रार्थना पहुचगई, उसका उत्तर भी आगया । कार्यक्रम भी गुरुदेव ने बतादिया । मै अपने कक्ष में चलकर तुझे सब समझा देती हू ।

युवति ने आभूषण मेरे सामने चढा दिया । दडवत की और रुक्मिणी के साथ उसके कक्ष मे चलीगई ।

कक्षमें पहुचकर रुक्मिणी ने उसे समझाया कि तेरे ऊपर भगवती कालिका को आना चाहिये। उनके आनेपर तुझे बेहोश होजाना है और उसी अर्धचेतनावस्था में ही तुझे घर-वालो पर क्रोध करना है। यहा तक कि लापर्वाही से उन-पर हाथ भी चला देना है। फिर चाहे वह सास हो चाहे पति हो।

रुक्मिणी ने उससे यह भी कहा था कि गुरुदेव समाधि में महाकाली जी के यहा गये थे पर महाकाली जी ने आने से इनकार कर दिया है। इससे गुरुदेव को कुछ नाराजी हुई। और उसने कहा कि यदि तुम नही आओगी तो मै उस लडकी से तुम्हारे आने का अभिनय कराऊगा। महाकाली जी ने अभिनय की अनुमति देदी है।

इसके बाद रुक्मिणी ने उसे अभिनय करके सब बताया। कि किस प्रकार उसे बेहोश होजाना है। बेहोशी मे क्या बकना है। फिर महाकाली के आवेश मे किस प्रकार आखे बनाना है, मुह बनाना हैं, लटे फटकारना हैं, हाथपाव चलाना हैं और इस समय अभिनय के समय क्या क्या बोलना है। रुक्मिणी ने सारा अभिनय स्वय करके बतादिया। और यह भी चेतावनी देदी कि उसके आनेपर भी अभिनय में अन्तर न पड़ना चाहिये। इस प्रकार सिखापढाकर मनोरमा को विदा कर दिया। उसका नाम मनोरमा था।

आज रुक्मिणी मनोरमा के घर के सामने से निकली कि उसके कुटुम्बियो ने आकर उसे प्रणाम किया। और कहा देवी जी, मनोरमा पर महाकाली जी आई हैं इसलिये हम सब

परेशान है । कोई उपाय कीजिये ।

रुक्मिणीने आश्चर्य से कहा– महाकाली जी ! भला महा–काली जी के सामने मैं क्या करसकू गी ? गुरुदेव सर्व समर्थ है वे ही कुछ करसकते है। उनसे निवेदन करना पडेगा।

मनोरमा के पति ने कहा– कुछ भी कीजिये पर इस घर से महाकाली जी को विदा कर दीजिये । उनका कहना है कि एक माह के भीतर वे मनोरमा को, मुझे और मेरी मा को लेजायगी ।

रुक्मिणी– ओह ! महाकाली जी सख्त नाराज है । मै दर्शन करके समझाने की कोशिश करती हू ।

रुक्मिणी मनोरमा के सामने गई । मनोरमा ने इस समय ऐसी मुद्रा बना रक्खी थी कि देखते ही डर लगे। उसने महाकाली को प्रणाम करके निवेदन किया कि इस घर पर करुणा कीजिये माता जी।

मनोरमा– तू कौन है ?

रुक्मिणी– मै गुरुदेव की शिष्या रुक्मिणी हू माताजी ।

मनोरमा– तो यहा क्यो आई है। क्या मुझसे लडने आई है ?

रुक्मिणी– आपसे तो कौन लड सकता है माताजी, स्वय शिव भी नही लड सकते । जब आप प्रकुप्त होती हैं तो शिव जी की छातीपर खड़ी होजाती हैं । मै किस खेत की मूली हू ।

मनोरमा– फिर क्या चाहती है ? यहा क्यो आई है ?

रुक्मिणी– मै तो घर के सामने से निकल रही थी कि मनोरमा के घरवालो ने यहा आपके पधारने का तथा आपके

रोष का समाचार दिया इसलिये आपके दर्शन को चली आई।

मनोरमा— तो होगये दर्शन, अब चली जा!

रुक्मिणी— ऐसे तो कैसे जाऊंगी माता जी! आपके रोष का कारण जानना चाहूंगी।

मनोरमा— मेरे रोष का कारण! मेरा रोष किसी पर नहीं है। मैं संसार पर दया करके नरक का संहार करती हूं। यह घर नरक बना हुआ है। इस लड़की को इस-घर में कोई नहीं चाहता इसलिये इसे लेजाऊंगी। और जो लोग इस लड़की को घर में लाकर भी अत्याचार करते हैं उन्हें भी लेजाऊंगी। इस तरह यह नरक मिटजायगा।

रुक्मिणी— आपको इस घर का नरक मिटाना है या इस घर को मिटाना है।

मनोरमा— मैं आदमियों की दुश्मन नहीं, बुराई की दुश्मन हूं। पर बुराई के साथ बुरों को भी मिटना पड़ता है।

रुक्मिणी— ठीक कहती है माता जी, अगर बुरों की बुराई मिट जाय तो एक तरह से बुरे मिट ही गये। अगर ये लोग बुराई छोड़ने को तैयार होजाय तो नरक मिट ही जायगा।

मनोरमा— हूं! बड़ी पंडिता मालूम होती है। अच्छा, अब जा चली जा, देखूं तू किस तरह बुराई को मिटाती है। एक माह के भीतर मैं यहां का नरक किसी न किसी तरह मिटा दूंगी।

रुक्मिणी— जैसी कृपा माता जी।

यह कहकर उसने मनोरमा को प्रणाम किया। और

घरके बाहर आकर मनोरमा के पति से बोली । महाकाली जी पर किसी का कोई वश नही है। हा ! गुरुदेव जरूर समाधि मे कैलाशपर जाकर शिव जी से निवेदन कर सकते हैं और शिव जी के अनुरोध मे महाकाली जी कृपा कर सकती हैं । इसके लिये तुम सब मनोरमा सहित गुरुदेव की शरण मे जाओ । उनसे निवेदन करो । यदि उनने कृपा करके समाधि मे शिव जी से भेट की तो समस्या हल होजायगी । यदि महाकाली जी तुम्हे क्षमा करदे तो बस, ठीक है ।

मनोरमा के पति ने स्वीकारता दी । रुक्मिणी ने आकर सारा विवरण मुझे सुनाया । अभी तक का कार्यक्रम सब व्यवस्थित ढग से पूरा हुआ था । अब आगे कोई कठिनाई नही थी ।

दूसरे दिन सब लोग सस्थान में आये । रुक्मिणी की योजना के अनुसार सब ने मेरे दर्शन किये । प्रार्थना की और उनकी प्रार्थना सुनकर मैंने समाधि लगाली । वे सब लोग रुक्मिणी के कक्ष में चलेगये । योजना के अनुसार मनोरमा के शरीर में महाकाली का प्रवेश हुआ । रुक्मिणी ने हाथ जोडकर कहा– माता जी, अब आप इस कुटुम्ब पर कृपा कीजिये । इन लोगो ने प्रतिज्ञा की है कि ये अपने घर मे शान्ति से रहेगे, प्रेम से रहेगे और मनोरमा को किसी भी तरह से तग न करेगे ।

मनोरमा– हू ! देख रुक्मिणी, समाधि मे तेरे गुरुदेव ने मेरे शिव को मनाया । मेरे शिव ने मुझे मनाया । इसलिये दोनो की बात रखने के लिये इन लोगो को क्षमा करती हू ।

परन्तु अब की वार यदि इन लोगो ने गडबडी की तो एक ही दिन मे सब को ढेर कर दूंगी ।

रुक्मिणी– आप सर्वसमर्थ है माता जी, पर अब ऐसा न होगा ।

मनोरमा– अच्छा तो मै जाती हू ।

इतना कहते ही मनोरमा एक तरफ को इस तरह लुडक गई मानो किसी बैठे हुए आदमी के सहसा प्राण निकल गये हों ।

थोडी देर में मनोरमा को होश आगया । रुक्मिणी ने कहा अब आप लोगो का सारा संकट टल गया । यह सब गुरुदेव की कृपा है । आप लोग तो साधारण स्थिति के गृहस्थ है इसलिये कोई बात नही, परन्तु कोई श्रीमान होता तो इसके बदले सस्थान की प्रभुसेवा के लिये दस पांच हजार गुरुदेव के चरणों पर चढाता । आप लोगो की जितनी शक्ति हो उतना करे ।

दूसरे दिन मनोरमा के पति ने पाचसौ रुपया नगद । कुछ कपड मिठाइया फल तथा पुष्प मालाए और श्रीफल भेट किये ।

उसके जाने के बाद रुक्मिणी मेरे पास आई ।

मैंने शाबाशी देते हुए कहा– तुम्हारा अभिनय पूरी तरह सफल रहा ।

रुक्मिणी ने जरा नाक सिकोडते हुए कहा– क्या सफल रहा । इतना अभिनय यदि हम दोनो ने किसी सिनेमा मे किया होता तो लाखो कमाये होते ।

मैं– पर उस समय हमारी गिनती नटनटियो में या अभिनेता अभिनेत्रियो मे ही होती ।

रुक्मिणी– पर अभिनेता अभिनेत्रियो का आकर्षण कम नही होता । वह नेताओ से भी अधिक होता है ।

मैं– पर आकर्षण होना एक बात है और प्रतिष्ठा होना दूसरी बात है । आज तुम अभिनेत्री नही हो, नेत्री भी नही हो, देवी जी हो । देवी की प्रतिष्ठा न नेत्रियो को मिल सकती है न अभिनेत्रियो को । इसके गौरव का तुम्हे अनुभव करना चाहिये ।

रुक्मिणी– हा, थोडा बहुत तो करती ही हू । परन्तु इससे ज्यादा गौरव एक दूसरी ही बात का करती हू ।

मैं– वह क्या ?

रुक्मिणी– मैं एक देवता का प्यार पागई हू । यह कह-कर उनने अपने ओठ मेरे ओठो से भिडा दिये ।

१०– गोपीलीला

मेरा सस्थान अब वैभवशाली तो हो ही गया है प्रति-ष्ठित भी होगया है । इतने पर भी मैं खूब मौज उडा रहा हू । कभी कभी मुझे दुनिया के लोगो पर हंसी आती है कि जो उन्हे ठगता है उसी की वे प्रतिष्ठा करते हैं और जो उन्हे सच्चा रास्ता दिखाता है, उसका अपमान करते हैं, उस-पर उपेक्षा करते हैं । ऐसा मालूम होता है कि दुनिया हम सरीखे लोगो से कहती है कि हमे लूटो ठगो और पुजो । बेवकूफ दुनिया की इस आवाज को मैंने अच्छी तरह से सुन लिया है और इसीलिये मैं दुनिया को लूट रहा हूं, ठग रहा

हू और पुज रहा हू । पर इतने मे मुझे सन्तोष नही है । मैं अपने सस्थान को और भी उन्नत करना चाहता हू । आज एक नई योजना मेरे दिमाग मे आई है कि सस्थान मे स्त्री पुरुषो की प्यास बुझाइ जाय । अनेक स्त्रिया, ज्यादातर विध-वाए, ऐसी है जो कामसुख के लिये तरस रही है पर उन्हे इसके लिये अवसर नही मिलता इसलिये भीतर ही भीतर उनका हृदय जलता रहता है । और बहुत से पुरुष भी ऐसे हैं जो अपनी पत्नी से सन्तुष्ट नही हैं, या एक ही स्त्री से सन्तुष्ट नही रहते हैं, या जिनके पत्नी ही नही है। उनका योग नई नई सुन्दरियो से मिलाया जासकता है इससे सस्थान के लिये धन की वर्षा तो होगी ही, साथ ही इस बहती गगा मे कभी कभी मैं भी हाथ धोलिया करूगा ।

परन्तु यह सब कार्य करना है धर्म के नाम पर और धार्मिक क्रिया की ओट मे । धन्य है हिन्दू धर्म ! जिसने इस काय के लिये भी साधन जुटा रक्खे हैं। श्रीकृष्ण का चरित्र उसने इस ढग का बना रखा है कि बडी से बडी विलासिता और बडा से बडा व्यभिचार धर्म की ओट मे धर्मक्रिया के नाम पर किया जासकता हैं । मुझे इसी योजना के अनुसार काम करना है।

आज कुछ विशिष्ट स्त्रिया आई थी । सभी युवतिया थी । उनके सामने मैंने श्रीकृष्ण चरित्र पर प्रवचन किया । कहा—क्या तुम लोग जानती हो कि जब अन्य अवतार अशा-वतार कहे गये तब श्रीकृष्ण पूर्णावतार क्यो कहे गये ?

सब मौन रही । तब मैंने कहा— आज इसी का रहस्य

तुम्हे बतलाता हू । अन्य अवतार सिर्फ धर्म को ही अपने जीवन में उतार सके, किसी ने मोक्ष को भी जीवन मे उतारा। पर चारो पुरुषार्थों को जीवन मे उतारने का काम किसी अवतार ने नहीं किया। यो तो मामूली आदमी के जीवन में भी सब पुरुषार्थ पाये जाते हैं पर इसीलिये वह अवतारी नहीं कहलाता। अवतार मे हर बात असाधारण मात्रा मे होती है, जन साधारण से कई गुणी होती है। श्रीकृष्ण मे सब पुरुषार्थ जन साधारण की अपेक्षा कई गुणे थे, इसलिये काम पुरुषार्थ भी कई गुणा था। और वह सब धर्म का अग था। जब कोई क्रिया धर्म का अग बनजाती है, तब भले ही वह व्यवहार के या सदाचार के भी विरुद्ध हो पर निन्दनीय नही रह जाती।

गोपीलीला की कुछ सुधारक कहलानेवाले नास्तिक लोग भले ही निन्दा करे पर उसीने श्रीकृष्ण को पूर्णावतारी बनाया था। श्री कृष्ण सच्चिदानन्द स्वरूप पूर्ण ब्रह्म थे, इसलिये उनकी गोपीलीला को ब्रह्मविहार कहना चाहिये। सच्चिदानन्द में आनन्द ही तो महत्त्वपूर्ण है और गोपीलीला आनन्दमय थी इसलिये उसे ब्रह्मविहार कहना सर्वथा उचित है। हम सब भगवान की सन्तान हैं, उन्हीं की राह पर हमें चलना है। पर जो कुछ करना है निर्लिप्त भाव से करना है। इसी निर्लिप्तता का तो प्रभाव था कि श्री कृष्ण हजारो रानियो और गोपियो के साथ रमण करते पर भी ब्रह्मचारी कहे गये। हमे भी इस निर्लिप्तता की साधना करना है। अगर हम गोपीलीला सरीखा ब्रह्मविहार करते हुए भी निर्लिप्त बन सकें तो काम और मोक्ष दोनो ही हमारे हाथ में आजायगे। इसे

ही कहते है दोनो हाथ लड्डू । होसकता है कि प्रारम्भ में निर्लिप्तता की साधना मे तुम्हे सफलता न मिले। पर इसकी चिन्ता न करना चाहिये। क्योंकि 'अभ्यासेन" सब काम अभ्यास से ही होते हैं इसलिये ब्रह्मविहार का अभ्यास करते करते निर्लिप्तता की भी साधना होजायगी। इसकेलिये बहुत ज्ञान की जरूरत नही है, विद्वत्ता की भी जरूरत नही है, जरूरत है श्रद्धा की, प्रेम की, भक्ति की। आखिर व्रज की वनिताए कुछ पडिता तो थी नही। फिर भी वे ब्रह्मविहार के लिये पतियो को, सास ननद को, गुरुजनो को भी पर्वाह न करती थी। ब्रह्मविहारियो को और ब्रह्मविहारिणियों को भी किसी की पर्वाह न करना चाहिये। हा! यह कलियुग है इसलिये इसमे बहुत बाधाए आसकती है इसलिये हमे सतर्कता से काम लेना है। ब्रह्म की इस साधना का डिडोरा दुनिया मे नही पीटा जासकता क्योकि इससे अपात्र लोग इसका दुरुपयोग करेंगे, निन्दा भी करेंगे। इसलिये यह साधना बिना डिडोरा पीटे शान्ति के साथ एकान्त मे होगी। तुम लोगो मे से जिनको ब्रह्मविहारिणी बनना हो मन और तन की पूरी तैयारी से आओ।

पहिले यहा राधाकृष्ण के नाम का जप होगा। फिर गोपियो के ब्रह्मविहार की कथा होगी। उसके बाद जो वनिताएं गोपी बनना चाहेंगी और जो पुरुष गोप बनना चाहेंगे उन सब का एकान्त मे ब्रह्मविहार होगा। उस समय पर हर एक नारी को अपने को राधा रूपमे देखना है और जिस पुरुष के साथ ब्रह्मविहार हो उसे श्री कृष्ण के रूप मे

देखना है । अपना अहकार छोडना है। अहकार ही तो मनुष्य को ईश्वर से अलग रखता है। परन्तु जब हम अपने को राधा या कृष्ण के रूप मे समझेगे तब अहकार कहा रहेगा ? हम तो ईश्वर मे ही समाजायगे। यही अहकार का त्याग और भगवान की लीला का अनुसरण ही ब्रह्मविहार है। इसके कार्यक्रम समय समय पर इस सस्थान मे हुआ करेगे। जिस जिसकी इच्छा हो वह इस साधना मे भाग लेसकता है।

मेरे प्रवचन का प्रभाव बहुत अच्छा पडा । यह बात उन स्त्रियो की मुखमुद्रा से तो मालूम होती ही थी पर जिस विशिष्ट अनुराग और उल्लास से उन लोगो ने मेरी चरण वन्दना की उससे भी उनकी प्रसन्नता का पता लगा।

ब्रह्मविहार के इस कार्यक्रम से अब सस्थान मे मौज-मजा की कमी न रहेगी । पुरुषो की और स्त्रियो की भीड लगने लगेगी । भेटे अनाप-शनाप आयगी । थोडी सी ब्रह्म-विहारिणियो मे बाट दी जायगी । वह प्रसाद ही होगा। बाकी सब तो सस्थान के ही अर्थात् मेरे ही काम आयगी। कुछ ब्रह्मविहारिणीयो को स्थायी रूप में रख लूगा । जिससे सदैव भौरो के झुड मडराया करेगे ।

इस भीडभाड से और जन धन की रेलपेल से कुछ समाचार पत्रो को भी गुलाम बनाया जासकेगा । कुछ पत्रकार तो वैभव की विशालता और भीड देखकर यो ही प्रभावित होकर चले आयगे। और कुछ के आगे कुछ टुकडे डाल दिये जायगे । इस प्रकार वे भी पूछ हिलाने लगगे । बस ! यश प्रतिष्ठा वैभव मौज मजा सभी कुछ मेरे हाथ आयगा। जहन्नुम

गया सत्य और जहन्नुम में गई जनसेवा, जब दम्भ के दम
'र लूटने ठगने से ही पूजा और वैभव की प्राप्ति होती है,
|नचाहा विलास मिलता है, तब इसका लाभ क्यो न उठाऊ !

११– ब्रह्मविहार

ब्रह्मविहार का कार्यक्रम खूब सफलता के साथ चलने लगा है। जिन जातियो मे विधवाविवाह का निषेध है उन जातियो की अनेक विधवाए स्थायी रूप मे ब्रह्मविहारिणी बनकर मेरे आश्रम में आगई हैं। कुछ तो कुमारिया भी आगई है । उनके पिता दहेज का इन्तजाम नही कर सके थे इसलिये वे कुमारिया भी इस ब्रह्मविहार में शामिल होगई । कैसा विचित्र समाज है ! जो कुमारिया जीवनभर ईमानदारी से सेवा करने को तैयार हैं उन्हें तभी स्वीकार किया जाता है जब उनके पिता हजारो रूपयो की भेंट दें । और जब वे ब्रह्मविहारिणी बनकर किसी तरह की सेवा करने को तैयार नही हैं, सिर्फ एकाध कटाक्ष ही फेंकती है या कभी ब्रह्मविहार मे उन्हे साथी बना लेती हैं इतने पर ही वे लोग सैकडो हजारो लुटाने को तैयार होजाते हैं। ईमान की, सच्चाई की, सेवा की, क्या दुर्दशा है समाज मे ! और व्यभिचार की, ठगी की, धोखेबाजी की कितनी अधिक कीमत बढी हुई है ! ऐसे मूढ समाज को में ठगू नही तो क्या करू ?

ब्रह्मविहारिणिया बनने के लिये जो युवतिया आई है उनमे सौन्दर्य कुछ कम ही हैं पर मेकअप की कला से उन्हें काफी आकर्षक बना दिया जाता है । पर यहा का तरीका वह तरीका नही जिसे वेश्याए अपनाती है । इस दिशा में

तो सिनेमा से अच्छा मार्गदर्शन मिलता है। मैं इन्हे शकुन्तला के समान ऋषिकन्या के रूप में सजवाता हूं। कम आभूषणोवाली मस्तानी फैशन से इनका आकर्षण खूब बढ़ जाता है। बालो की सजावट एक से एक बढकर तरीके से कराता हू। आभूषणो के नाम पर चमकदार जपमाला ही देता हू। बाकी पुष्पमालाओ से तथा ऊचे दर्जे के प्रसाधनो से इनका श्रृंगार कराता हूं।

सुबह और शाम दोनो समय भजन का कार्यक्रम होता है। उसमे बढिया सगीत रहता है। गोपी प्रेम के गीत और कव्वालिया रहती हैं। हारमोनियम, वीणा, तवला, मंजीरा आदि सब तरह के वादित्र रहते हैं और उन्हे बजाने का काम ब्रह्मविहारिणिया ही करती हैं। सुबह के समय भी लोग आते हैं पर महत्त्वपूर्ण कार्यक्रम होता है शाम का। बिजली के प्रकाश मे सौन्दर्य निखरता है और उसके दोष छिपते हैं। फिर रात मे ब्रह्मविहार का भी सुभीता होता है। प्रार्थना के समय जो लोग आते हैं वे कुछ न कुछ भेट चढाते ही हैं। रुपया से कम तो कोई चढ़ाता ही नही। और ब्रह्मविहार का शुल्क पच्चीस रुपये से कम नही है। अगर सौ रुपया रक्खूं तो भी लोग ब्रह्मविहार मे शामिल होगे पर अधिक से अधिक लोग ब्रह्मविहार का आनन्द लेसके इसलिये पच्चीस रुपया ही शुल्क रक्खा है। हा ! जो विशेष सुन्दरिया है उनके साथ ब्रह्मविहार करने का शुल्क पचास और सौ भी है। इसप्रकार अर्थ पुरुषार्थ की भी साधना बहुत अच्छी होरही है।

एक बात और है । मैं ब्रह्मविहारिणियो को दार्शनिक शिक्षण भी देता हू जिससे वे अच्छे अच्छे टीकाकारो को निरुत्तर कर देती हैं ।

एक बार एक टीकाकार आये । बोले- तुम धर्म क्या करती हो मौज मजा करती हो । ब्रह्मविहारिणी ने कहा- मौज मजा किस भाषा का शब्द है, मै समझी नही । यह आर्य भाषा का शब्द तो है नही । मौजमजा के स्थान पर आर्य भाषा का शब्द बोलिये । उनने कहा- मौजमजा अर्थात् आनन्द । ब्रह्मविहारिणी ने समझने का डौल करते हुए कहा। अच्छा, यह बात है ! तब तो इसमें कोई बुराई नही है। परमात्मा सच्चिदानन्द है और आनन्द ही उसका श्रेष्ठ रूप है तब आनन्द हम प्राप्त करे इसमे आपत्ति की क्या बात है ? यह तो सच्चिदानन्द को साधना हुई । बेचारे टीकाकार अपनासा मु ह लेकर रह गये ।

एक बार एक टीकाकार आये । बोले-तुम लोगो ने धर्म के नाम पर सब गडबड कर दिया है । ब्रह्मविहारिणी ने कहा- ' हम लोग ब्रह्म की उपासिकाए है, भेदभाव नही मानती । भेदभाव हटाने को ही आप लोग गडबड करना कहते है पर ब्रह्म की उपासना में भेदभाव को जगह कैसे रहसकती है । 'मृत्यो स मृत्युमाप्नोति य इह नानेव पश्यति।' जो भेदभाव देखता है उसे यमलोक मिलता है। ' ये बेचारे भी चुप होकर रहगये ।

एक टीकाकार आये । बोले- तुम लोगो ने धर्म के नाम- पर यह क्या भ्रष्टाचार मचा रक्खा है । ब्रह्मविहारिणी ने

कहा— आप पूर्णावतार श्री कृष्णजी की निन्दा कर रहे हैं।

भगवान श्रीकृष्ण ने जो लीलाए की वे मनुष्य को सिखाने के लिये ही तो की थी। भगवान का अवतार राक्षसो के वध के लिये मुख्यता से नही होता, किन्तु मनुष्य को एक आदर्श जीवन दिखाने के लिये होता है। भगवान ने यदि वे लीलाए की तो वे मनुष्य को पाठ पढाने के लिये ही की हैं।

"मर्त्यावतारस्त्विह मर्त्यशिक्षण रक्षोवधायैव न केवल विभो।" तो जब भगवान ने लीलाओ का शिक्षण दिया तो उसके प्राप्त करने मे हम लोग क्यो चूके। भगवान का अनुकरण करने को यदि आप भ्रष्टाचार कहेगे तो इसमे हमारी निन्दा न होगी, भगवान की निन्दा होगी।' वे भी निरुत्तर होगये।

इस प्रकार मेरे शिक्षण से ये ब्रह्मविहारिणिया बहुत तार्किक, हाजिर जबाब और सकोचहीन लज्जाहीन बन-गई है। ये सब मेरी ढाल बनगई हैं। उनकी इस हाजिर जबाबी का भी बहुत अच्छा प्रभाव हुआ है।

श्री कृष्ण का जीवन चरित्र जैसा शास्त्रकारो ने लिख-दिया है, हमारे लिये वरदान है। फिर शास्त्र कैसे भी हो मैं अपनी असाधारण बुद्धि से उन्हे हर काम में जोत सकता हू, पापो पर पर्दा डालने का साधन बना सकता हू। जब समाज मूर्ख है, विषयाध है, हरामखोर है तब उसे उल्लू बनाना कौनसी बड़ी बात हैं।

१२— वेदयज्ञ

मेरा सस्थान जिस द्रुतगति से विकसित हुआ है उसे

देखकर मेरे आश्चय और हर्ष का ठिकाना नही है। प्रतिष्ठा, वैभव और विलास, सभी कुछ मैंने भरपूर पाया है। मेरे पास जन भी है, धन भी है । इतनी सफलता इतनी जल्दी मिल जायगी इसकी मुझे कल्पना भी नही थी । फिर भी इस मामले मे सन्तोष करना ठीक नही। सन्तोष प्रगति मे बाधा डालता है। इस विषय मैं आज मायादास से काफी चर्चा हुई। मायादास का कहना है कि हमें एक से एक बढकर नये नये कार्यक्रम रखते रहना चाहिये । लोग भिन्न भिन्न रुचि के होते हैं । इसलिये सभी की रुचि का ध्यान रखते हुए नाना तरह के कार्यक्रम रखना चाहिये । दुश्चरित्र विलासी धन-वानो को प्रलोभनो मे डालकर उनसे पैसा काफी खीचा जारहा है, पर कही कही इसकी निन्दा भी सुनाई दे जाती है । इसलिये मायादास का कहना है, और मै भी सोचता हू कि कुछ दूसरे कार्यक्रम भी शुरु करना चाहिये । जिससे और भी अधिक सख्या मे जनता ठगी जासके । और पढे लिखे मूर्खो का भी आकर्षण बढे । ज्यो ज्यो जनबल और धनबल बढेगा त्यो त्यो विरोधियो और आलोचको के हौसले ठडे होते जायगे । सत्य को कोई नही पूछता । दुनिया ताकत की, वैभव की, प्रतिष्ठा की और प्रलोभनो की पूजा करती है। आज मेरे पास यह सब कुछ है। और इसी पूजी के बलपर यह सब कुछ और बढनेवाला है । दुनिया की मूढता की भूमिपर मै अपनी चालाकी के जलसे प्रतिष्ठा वैभव विलास आदि के बीज पनपा रहा हूं, इसकी अच्छी खेती कर रहा हू। मायादास की बात पर विचारकर

कुछ और योजनाए भी बनानेवाला हू ।

लोगो को वेदों मे बडी भक्ति है । वह आदिम युग का धर्मशास्त्र है और आदिम युग का साहित्य । ससार में इतना प्राचीन ग्रथ दूसरा कोई नही है इस दृष्टि से उसका महत्त्व है । परन्तु उसे ईश्वर की वाणी माना जाता है। उसे अपौरुषेय कहा जाता है । इससे उसका महत्त्व खूब बढा दिया गया है । हा ! उसे इस दृष्टि से अपौरुषेय कहा जासकता है कि उसका बनानेवाला कोई विशेष व्यक्ति नही है, वह ग्रामगीतो की तरह जनता का साहित्य है। यह कोई खास महत्त्व की बात नही है पर इसे ही अच्छे अच्छे शब्द देकर खूब महत्त्व दे दिया गया है । इस महत्त्व के सस्कार बाल्यावस्था से मनुष्य पर डाल दिये जाते हैं जो विद्वान बन जाने पर भी नही जाते। इसलिये विद्वान लोग भी अपनी विद्वत्ता का उपयोग उस आदिम अविकसित साहित्य के गीत गाने में करने लगते है ।

विद्वानो को इसमे एक लाभ यह होजाता है कि जनता की भक्ति का उपयोग उनकी दूकानदारी मे होने लगता है। खैर ! कुछ भी हो। जब जनता की नासमझी का लाभ अच्छे अच्छे उठाते हैं तब मुझ सरीखा चलता पुरजा आदमी यह लाभ न उठाये यह कैसे होसकता है । इसलिये मेरी फलती हुई दूकानदारी में एक वेदविभाग भी होगा । वेद की किसी बात को तो लोग समझते नही हैं और इसे वेदो का सौभाग्य ही समझना चाहिये। क्योकि यदि लोग वेद मन्त्रों का अर्थ समझने लगें तो बार बार की बालोचित स्तुतियो

के कारण उनको भी श्रद्धा कम होजाय। पर लोग बिना समझे ही वेदो के परमभक्त है इसलिये कुछ प्राचीनता प्रेमी पडितो की और हम सरीखे चतुर चालाक लोगो की खूब बन आती है।

वेदो मे सब से अधिक महत्व का कार्यक्रम यज्ञ का है। यज्ञ के नाम पर लोग खूब जुडते हैं। वे कुछ समझते नही, पर न समझने के कारण ही भक्ति खूब करते है। इसलिये उन्हे समझने भी नही दिया जाता। उनकी मूढता और प्राचीनता की भक्ति का दुरुपयोग कर यज्ञो के तमाशे किये जाते हैं। कैसा मूढ है यह देश! बढिया से बढिया खाद्य सामग्री जलाने को यह धर्म समझता है। घी शक्कर मेवा मनुष्यो को मिलना कठिन है पर यज्ञ के नामपर वह पानी की तरह बर्बाद किया जाता है। पुराने जमाने में आर्य लोग मास खाते थे, यज्ञ की अग्नि मे पकाते थे इसलिये इस रूप मे कुछ उपयोग रहा होगा। फिर उन दिनो मनुष्य वैज्ञानिक क्षेत्र मे तथा अन्य ज्ञान के क्षेत्र मे बालक था। आग जलाना एक चमत्कार था। आग को देवता माना जाता था। फिर यह भी कल्पना थी कि देवता लोग आग के जरिये ही भोजन पाते हैं। इन सब मूढताओ के कारण यज्ञकाड होते थे। पर अब न आग को देवताओ का मुह माना जासकता है न आग जलाना कोई चमत्कार है फिर भी लोग आदिम युग की मूढता से चिपके हुए है। चिपके है तो चिपके रहें अपना तो इससे लाभ ही है। यज्ञ के बहाने हजारो आदमी आयेगे। मेरा सन्मान करेगे। लाखो का खर्च होगा उसमे से

बरबाद होने से जो कुछ बचेगा सब मायाराम का होगा। जनवैभव धनवैभव और प्रतिष्ठावैभव सभी कुछ तो मुझे मिलेगा। लोग यदि इसी तरह धन श्रम सुविधा गौरव आदि खोते हैं तो खोया करे। मै लाभ उठाने मे क्यो चूकू। थोड़े ही दिनो मे शानदार यज्ञ का आयोजन करता हू।

१३– यज्ञ पर विवाद

यज्ञ की तैयारी होचुकी है। मैने जगह जगह बड़े बड़े पोस्टर चिपकवा दिये है कि 'सतयुग लाना हो तो यज्ञ करो' इस पोस्टर से मै बहुत खुश हुआ। खुश होने का एक बड़ा कारण यह था कि इसके द्वारा दुनिया को तो अच्छी तरह ठगा ही गया था पर इसके लिये झूठ बिलकुल नही बोलना पड़ा। मैंने यही कहा था कि सतयुग लाना हो तो यज्ञ करो। यह बात बिलकुल सच है। यदि लोग यज्ञ करेंगे तो सचमुच वही प्राचीन युग लौट आयगा जिसमे ज्ञान विज्ञान के क्षेत्र में मनुष्य बालक था। सतयुग, आदिम युग, मूढता युगका परिचय देता है। ऐसी हालत मे यज्ञ द्वारा सतयुग लाने की बातमें मिथ्या क्या है।

खैर! इस यज्ञ मे हर तरह से अच्छी कमाई होगी। मैं समझता हू कि पचास हजार रुपयो का मुनाफा तो हो ही जायगा। इसके सिवाय मै प्राचीन सभ्यता का उद्धारक रक्षक आदि समझा जाऊगा। कुछ लोग जो मेरे ब्रह्मविहार के कार्यक्रम से नाराज हैं उनकी नाराजी भी दूर होजायगी। विलास पर कुछ पर्दा भी पड जायगा। मेरे ब्रह्मविचार की आलोचना करनेवालो के आगे भी कुछ टुकड़े डाल दिये

जायगे। तब उनका मुह भी बन्द होजायगा। यज्ञ से दुनिया की बर्बादी भले ही हो पर मेरा तो फायदा ही फायदा है।

आज कुछ सुधारक तरुण मिलने के लिये आये थे। बोले यज्ञ के विषय मे कुछ चर्चा करना है। ये लोग चर्चा क्या करेगे, मै समझ गया। यज्ञ के विरोध मे ये लोग जो कुछ बोलेगे वह सब मै जानता हू। इसलिये मैने उन्हे टालना चाहा। मैने कहा— यज्ञ का कार्यक्रम आस्तिको के लिये है, वे ही इसका मर्म और उसकी उपयोगिता समझ सकते है। तुम लोग आस्तिक हो या नास्तिक ?

वे बोले— न हम आस्तिक हैं न नास्तिक, जिज्ञासु हैं। आपके साथ चर्चा करने पर जो बात समझ मे आजायगी उसीके अनुसार आस्तिक या नास्तिक बनजाय गे।

उन लोगो का उत्तर बहुत चतुरता से भरा था इस-लिये मै उन्हें टाल न सका। पर सब के सामने चर्चा करना ठीक न होता इसलिये मै उन्हे एकान्त कक्ष मे लेगया। क्योकि मै जानता था कि चर्चा मे उन्हे सन्तुष्ट न कर पाऊगा, तर्कपूर्ण उत्तर भी न दे पाऊगा। यह बात सस्थान के भी किसी व्यक्ति के ध्यान में न आना चाहिये, रुक्मिणी के भी नही, फिर अन्य भक्तो की तो बात ही दूसरी है। इसलिये मै उन्हे एकान्त कक्ष मे लेगया। और कहा कि अब पूछो क्या पूछना चाहते हो ?

उनने कहा— यज्ञ में घी शक्कर मेवा आदि जलाने का क्या अर्थ है ?

मै— यह देवताओ को भेट है। और देवताओ को अपनी खाद्यसामग्री मे से अच्छी से अच्छी सामग्री दी जाती है।

वे– पर आप तो इसे आग में जलाते हैं, देवताओ को कहा देते है ?

मै– अग्नि ही तो देवताओ का मुख है । अग्निमुखा वै देवा "।

वे– होसकता है कि देवता लोग आग के ही बने हो और इसीलिये उनका मुह भी आग का हो । पर आप देवताओ के मुह मे आहुति नही डालते । देवताओ का मुह हमे मिल-जायें, फिर भले ही वह आग का हो तो उसमे घी शक्कर मेवा डालना किसी तरह उचित कहा जासकता है, पर जिस चाहे आग मे आहुति डालने से देवताओ के मुह मे आहुति डालना नही कहा जासकता । मनुष्य का मुह हाडमास चमडे का है । परन्तु किसी भी हाडमास चमडे मे भोजन डाल देने से मनुष्य को न मिलजायगा । किसी भी आगमें आहुति डालनेसे आप कैसे आशा करते हैं कि वह देवताओ के मुह मे पहुचगई ?

इन लोगो का तर्क जबर्दस्त था । और सच बात तो यह है कि मै स्वयं इन्ही विचारो का हू । पर यह तो सवाल ठगी की दूकान पनपाने का है । इनके तर्क पर ध्यान देने से कैसे चलता । पर अपने विचारो के विरुद्ध भी मैने जोर लगाया और कहा– यहा लाक्षणिक भाषा का उपयोग किया गया है । अग्नि मे आहुति देने से वह देवताओ को मिलती है इसीलिये उन्हे अग्निमुख कहा गया है ।

वे– पर अग्नि मे डालने पर उन्हे क्या मिलेगा ? वह सब तो जलकर राख होजाता है और वह राख भी यही रहती है । वह राख भी देवताओ के पल्ले नही पडती ।

मैं– पर धुवां तो आसमान की तरफ जाता है। और आसमान मे ही देवता रहते हैं। उस धुए से ही उन्हे तृप्ति होजाती है।

वे– पर वह धुवा भी तो बहुत दूर नही जाता। उसके कण भी थोडी दूर जाकर वायुमण्डल मे विलीन होजाते हैं हमारे सिर पर सौ दो सौ फुट पर तो देवताओ का निवास है नही। और उतनी दूर जाने पर तो धुवा विलीन ही होजाता है। और अब तो वायुमण्डल के बाहर जाकर भी चन्द्रमा तक मनुष्य जाच परख कर आया है। देवताओ का निवास, उनके विमान आदि कही नही मिले। चन्द्र पर तो हवा पानी वनस्पति जीव जन्तु आदि कुछ भी नही है। कहा रहते है ये देवता ? और कैसे कगाल है कि जिनके पास अपनी गुजर के लिये कुछ भी नही है। जली हुई खाद्य सामग्री के धूए पर जिन्हे गुजर करना पडती है। और धूए के कण भी वायुमण्डल मे विखर जाते हैं सो उन बिखरे कणो को ढूढने मे लगे रहते हैं। इतनी तुच्छ और बेकार चीज भी देवताओ के पास नही है। फिर वे देवता हमारा क्या कल्याण करेगे ? हमे क्या देगे ?

मेरे पास इन बातो का कोई उत्तर न था। और होता कहा से जब कि इनका उत्तर हे ही नही। परन्तु निरुत्तरता स्वीकार कर लेने का अर्थ होता अपनी सब योजना चौपट करा लेना। इसलिये मैंने पैंतरा बदलकर कहा– आप लोग नास्तिक हैं, घोर भौतिकवादी। ऐसे लोग आध्यात्मिक और दिव्य जगत का रहस्य समझ ही नही सकते। उसके लिये

श्रद्धा की जरूरत होनी है जो कि आप लोगो के पास है ही नही, इसलिये आप लोगो को आध्यात्मिक दृष्टि से यज्ञ की उपयोगिता समझाना वेकार है। तुच्छ भौतिकवाद के आधार से ही आप लोगो को समझाना होगा ।

वें– श्रद्धा नही अन्धश्रद्धा कहिये। वुद्धि विवेक समझदारी को किनारे रखकर ही आप की वाते मानी जासकती हे । समझने का तो सवाल ही नही है क्योंकि समझदारी को किनारे रखकर ही मानना है । खैर! आप तुच्छ भौतिकवाद के आधार से ही समझाइये ।

मैं– भौतिकवाद की दृष्टि से भी यज्ञ से अनेक लाभ हैं । मैं एक एक लाभ का स्पष्टीकरण करता हू । पहिला लाभ तो यह है कि यज्ञ मे जो आहुतिया दी जाती हैं उनसे हवा स्वच्छ होती है । वीमारी के कीटाणु मरते हैं इससे लोग वीमार नही होते ।

वे लोग हसकर वोले– यज्ञ में जव अन्न सामग्री जलने लगेगी तव लोग यो ही भूखे रहने लगेंगे। और जो भूखे रहने लगेंगे उनके पास बीमारी क्या आयगी। भूख ही बीमारी को खाजायगी । फिर गम्भीरता से वोले– हवा को स्वच्छ करने के लिये घी मेवा और अन्न सामग्री जलाने का कोई अर्थ नही । जलाना ही हो तो नीम की पत्ती, गूगल, धूप आदि जलाना चाहिये । ये चीजें खाने के काम भी नही आती और हवा को स्वच्छ भी करती हैं, कीटाणु मारती है। फिर यह वात भी गलत है कि हवा शुद्ध करने के लिये आहुतिया दीजाती हैं ।

मैं– यह बात गलत क्यो है ?

वे– क्योकि यज्ञ के लिये जो स्थान नियत किया जाता है वह बडा स्वच्छ होता है। बल्कि खुले मे भी होता है वहा कीटाणुओ को सम्भावना ही कम होती है । कीटाणुओ की सम्भावना होती है सडास मे, पेशावघर मे, अधेरे कमरो में, भडार मे, कही कही शयनागारो मे भी, पर यहा यज्ञ नही किये जाते । यदि कीटाणुओ को नष्ट करना यज्ञ का लक्ष्य होता तो जिसप्रकार फिनाइल वगैरह हम सडास आदि में डालते हैं उसीप्रकार यज्ञ भी उन्ही स्थानो पर किये गये होते पर ऐसा नही होता इसका कारण यही है कि वायु-शुद्धि उसका लक्ष्य नही है।

उनकी बातों का उत्तर था ही नही, मै स्वय इन बातो को जानता मानता था पर यह अवसर जानने मानने का नही था। इसलिये मैंने कहा तुम लोग यज्ञ का अपमान ही करना जानते हो उसकी वास्तविकता समझना नही चाहते। धुए के अणु उसी जगह प्रभाव नही डालते जहा वे पैदा होते हैं किन्तु दूर दूर तक प्रभाव डालते हैं। सारे देशमे प्रभाव डालते है। पर तुम लोग इन सूक्ष्म रहस्यो को क्या समझो।

वे– माना कि हम लोग बुद्धिमान नही हैं फिर भी जो बात कामन सेंस (साधारण बुद्धि) में भी नही जचती उसे कैसे मानलें। धुए का असर दूर भी होता होगा पर अधिक असर तो वही होगा जहा वह घना होगा। इसलिये गन्दी जगहो में ही यज्ञ करना चाहिये जिससे उस गदी जगह को घना धुआं मिल सके, और वहा जो अधिक कीटाणु होवे

मर सके। और फिर हम लोगो का तो यह कहना है कि जलाने के लिये उन्ही चीजो का उपयोग करना चाहिये जो खाने के काम मे नही आती किन्तु कीटाणुओ का नाश अधिक करती है। युगाडा मे इतने कीट मच्छर थे कि वहा बीमारियों के कारण कोई रहना तक पसन्द नही करता था पर वहा विना यज्ञ के इतनी स्वच्छता लादी गई है कि वहा का काला बुखार, जिसके होनेपर कोई जिन्दा न बचता था, अब इति-हास की चीज बनगई है। इसलिये हमे तो यज्ञ की यह उप-योगिता समझ मे नही आती। दूसरी कोई उपयोगिता हो तो बताइये।

मै– तुम लोगो की समझ मे न यह उपयोगिना आयगी न वह, नास्तिक बुद्धि में आस्तिकता की बाते समझ मे आही नही सकती। फिर भी एकाध उपयोगिता और बताये देता हू। वर्षा का मुख्य कारण यज्ञ है। यज्ञात्पर्जन्य। यज्ञ से वर्षा होती है। वर्षा से अकाल दूर होता है, अन्नोत्पादन बढता है। अन्नोत्पादन बढ़ाने के लिये यदि थोडा बहुत अन्न आहुतियो मे खर्च भी किया जाय तो समाज फायदे मे ही है। आज कल वर्षा घट गई है इसका कारण यही है कि यज्ञ नही होते।

वे– वर्षा घटने का कारण तो जगलो का घट जाना है क्योकि जगलो के न रहने से वातावरण ऐसा होजाता है कि भाफ के बादल नही बन पाते। इससे वर्षा रुक जाती है। यज्ञो का वर्षा से कोई सम्बन्ध नही बैठता। अन्यथा मार-वाड़ी सेठ मारवाड मे यज्ञ कराकर मारवाड को सरसब्ज बना

देते । वहा पजाब से नहर लाने की जरूरत न होती, न वहा मरुस्थल रह पाता । और चेरापुंजी मे जहा छह सौ इंच वर्षा होती है वहा कोई यज्ञ नही करता । भारत के बाहर भी कही यज्ञ नही होते पर वर्षा सब जगह होती है । इंग्लैंड मे युगाडा मे बारह माह वर्षा होती है पर वहा कोई यज्ञ नही करता । यज्ञो से वर्षा का कोई अविनाभाव सम्बन्ध नही मालूम होता । फिर यज्ञ मे है क्या चीज जिससे बादल बनेगे ?

मैं– यज्ञ मे जो धुआ निकलता है उसीसे तो बादल बनते हैं ।

दे– धुए से तो कज्जल ही बन सकता है । क्योकि धुए में तो कार्बन आदि तत्त्व ही होते हैं जो पानी में नही पाये जाते । उनसे पानी कैसे बनेगा ? धुआ कोई भाफ तो है नही । और फिर सेर आधसेर भाफ से करोडो मन पानी कैसे बनजायगा, जो खेतो को सीच दे और जलाशयो को भरदे ।

मैं– देखो वर्षा का देवता है इन्द्र, और यज्ञ मे मुख्यता से इन्द्र की स्तुति की जाती है जिससे वह प्रसन्न होता है और प्रसन्न होकर जल बरसाता है ।

वे– यदि यज्ञ करके इन्द्र को प्रसन्न न किया जाय तो क्या जल न बरसेगा ?

मैं– कदापि नही ?

वे– तो भारत के बाहर कही भी यज्ञ नही किये जाते तब वहा जल क्यो बरसता है ? बल्कि भारत से अधिक भी

बरसता है, बारह माह बरसता है। वर्षा का कारण यज्ञ तो कदापि नही मालूम होता न और कोई भौतिक कारण है। यज्ञ का कारण मूर्खता है।

मैं– कैसी मूर्खता ?

वे– पहिले जमाने मे अर्थात् वैदिक युग मे लोग विज्ञान के बारे मे बच्चे थे। वे यह नही समझते थे कि वर्षा कैसे होती है ? रोग कैसे होते हैं ? वे जाते कैसे हैं। इन सब का कारण वे देवताओ को मानते थे। इसलिये वे उन्हे प्रसन्न करने के लिये भेट चढाते थे। और उस समय मनुष्य मांसभक्षी था इसलिये अच्छा से अच्छा मास वे देवताओ को अर्पित करते थे। और कच्चे मास की अपेक्षा पका मास स्वादिष्ट होता है इसलिये वह आग में मास डालते थे। पकने पर उसका प्रसाद बाटते थे। पर बाद मे मनुष्य इतना क्रूर न रहा। महावीर और बुद्ध के प्रयत्न से उसे पशुवध से घृणा होगई इसलिये उसने यज्ञ बन्द कर दिये। और सैकडो वर्षो से यज्ञ बन्द ही थे। पर यज्ञ ब्राह्मणो की दूकानदारी थी इसलिये फिर खडा किया गया। धर्म के नाम पर पशुवध से लोग घृणा करते थे इसलिये जो खाते उसी में से अच्छी से अच्छी चीजें आगमे डालने लगे। उन्हे इतना भी विवेक न रहा कि मास तो आगमे भूना जासकता है घी शक्कर नही भूने जासकते इसलिये मास की नकल में वह अन्न खाद्य सामग्री जलाता है। देश की बर्बादी भले ही होरही हो पर ब्राह्मण की दूकानदारी खडी होगई है।

मैं– क्या समाज इतना मूर्ख है कि वह इतनी बात

न समझें ?

वे– समाज की मूर्खता असीम है।

मैं– क्या उस असीम मूर्खता को नष्ट करने की ताकत तुम लोगो मे है ?

वे– समाज की मूढता को बड़े बड़े भी दूर नहीं कर पाये तब हम किस खेत की मूली हैं।

मैं– ठीक ! यही मैं कहता हू। तुम लोगो को शायद मालूम नही कि मैं भी सुधारक हूं या यो कहो कि सुधारक था। सोचा था कि समाज की मूढता मैं हटा दूगा पर न हटा पाया और इस प्रयत्न मे बर्बाद होगया। तब मुझे यही निर्णय करना पडा कि जब समाज अपना हित नही समझना चाहता बल्कि अपने हितैषियो को बर्बाद करने पर तुला है, विरोध उपेक्षा निन्दा असहयोग से अपने सच्चे हितैषियो को चौपट कर देना चाहता है और उन्ही की प्रतिष्ठा करता है, उन्ही को वैभवशाली बनाता है जो उसे गुमराह करते है लूटते हैं, ठगते हैं। तब मैंने यही निर्णय किया कि समाज जाय जहन्नुम मे, मै उसकी मूढता का उपयोग कर अपने को प्रतिष्ठित और सम्पन्न बनाऊंगा। और वही मैं कर रहा हू। तुम अभी लडके हो, जोश है, पर समाज हितैषी बनकर भूखे मरोगे, दर दर की ठोकरे खाओगे, प्रतिष्ठा आदि तो दूर, जिन्दे भी मुर्दो मे गिने जाने लगोगे तब तुम्हारी अक्ल भी ठिकाने आजायगी। सच्चाई और जनहित की सब बाते भूल जाओगे। शायद ठोकर खाकर ही सीखोगे। और जो ठोकर खाकर सीखता है वह मूर्ख है

वे– अगर ठोकर खाकर सीखने से कोई मूर्ख कहलाता है तो समझदार कौन है ?

मैं– समझदार वह है जो दूसरो की ठोकरो से कुछ सीखता है । खुद ठोकर खाकर सीखा तो क्या सीखा ? होश्यार तो वह है जो दूसरो की ठोकर से कुछ सीखले । मैंने बहुत ठोकरे खाई है उनसे कुछ सीख सको तो समझदार बनजाओगे । आज तो तुम लोग महामूर्ख ही हो, क्यो कि मेरी ठोकरो से भी सीखने को तैयार नही हो ।

वे लोग चुप होगये, चिन्ता मे पडगये । मैं उनके चेहरो का उतार चढाव देखता रहा । मैंने कहा– तुम लोग अभी क्या धधा करते हो ?

वे लोग गहरी सास लेकर बोले– अभी तो हम लोग बेकार हैं । एक तरह से भूखो ही मरते है ।

मैं– क्या इन सच्चाई और जनहित की बातो से पेट नही भरता ?

वे– इससे क्या पेट भरेगा ?

मैं– तब भी तुम मूर्ख बने हुए सच्चाई से चिपटे हो !

वे– तो झूठ से चिपटने मे भी पेट कैसे भर जायगा ?

मैं– वह रास्ता मै बता दूगा । तुम लोग मेरे काम में सहायक होजाओ । यज्ञ का प्रचार करो । प्राचीन सभ्यता के, ऋषि मुनियो के, वेदो के गीत गाओ । इससे यज्ञ मे हजारो आदमियो का सहयोग बढजायगा । आमदनी बढ जायगी । मैं तुम सब को सौ सौ रुपया महीना दूगा । आमदनी बढने पर और भी बढा दूगा । तुम मेरा प्रभाव बढाओगे तो मेरी आमदनी भी बढेगी और मै तुम्हारा प्रभाव बढाउगा और

वेतन भी बढा दूगा। इस मूर्ख समाज के भला करने के प्रयत्न से तुम्हारा भला न होगा अपना भला चाहते हो तो मेरे पीछे आओ। मेरे अनुभवो से कुछ सीखो।

वे चुप होगये। फिर बोले– इस विषय में सोचने के लिये हमें अवसर दीजिये।

मै– अवसर जितना चाहे लेलो, लेकिन भावुकता मे बहकर अपनी भलाई पर उपेक्षा न करना। याद रखो, हजारो वर्ष से समाज हितैपियो को हितैषिता का दड देता आया है। इस दड से न उसने छोटो को छोडा न वडो को। किसी तरह जिन हितैषियो ने इतिहास मे स्थान बना लिया वे वड बनगये, अमर होगये। पर छोटे तो मिट ही गये! तुम लोग हितैषिता के दड से मिट ही जाओगे। इसीलिये मै कहता हू कि हितैषिता के चक्कर में पडकर उसका दड न सहो, अपनी भलाई पर उपेक्षा न करो !

वे– नही करेगे। आपकी व्यावहारिकता से जरूर बहुत कुछ सीखेगे। इसकेलिये हम आपको धन्यवाद देते हैं।

इतना कहकर वे लोग चले गये। सम्भव तो यही है कि वे मेरे चेले और सहायक बन जायगे। यदि न बने तो भी अब विरोध न करेगे। हा! अब समाज की भलाई के लिये कोशिश न कर पायेगे। सो समाज भलाई के लायक कहा है! जो समाज अपने सच्चे हितैपियो को न समझता हो, विरोध असहयोग उपेक्षा से उन्हे बर्बाद कर देता हो वह तो पशु है। और पशु को पशु समझकर उसका शोषण करना, उसे जोत लेना उचित ही है। मै यही कर रहा हू। अब मुझे समाजहित नही चाहिये अपना लाभ चाहिये।

१४– दिव्य चमत्कार

आज मायादास के जरिये दो आदमियो को वुलाया था। मेरे जीवन को एक चमत्कारी जीवन सावित करने के लिये उनका उपयोग करना है। उनको मैंने समझाया कि तुम्हें इस नगर में तीन माह अंधे और लगडे बनकर भीख मागना है। जो अधा वनेगा उसे अकेले मे भी इस ढग से रहना है कि किसी को पता न लगे कि वह अधा नही है। और जिसे लंगडा वनना है उसे भी इस ढग से रहना है कि किसी को पता न लगे कि वह लगडा नही है। रात मे अपने एकान्त डेरे पर ही स्वाभाविक रूप में रहा जासकता है। पर जहा भी जन सम्पर्क की सम्भावना है वहा अधा और लगडा बन-कर ही रहना पडेगा।

उनने यह वात मजूर की पर कहा कि इसमे कष्ट वहुत है। एक तरह की तपस्या ही समझिये। अधा न होने पर भी अंधे की तरह रहना, लगडा न होने पर भी लंगडे की तरह रहना बहुत कठिन है। फिर भी रहेगे। पेट के लिये सव कुछ करेगे। पर हमे मिलेगा क्या ?

मैंने कहा– अधा और लगडा वनकर जव तुम भीख मागोगे तव तुम्हे इतना तो भिक्षा में मिल ही जायगा जिससे अच्छी तरह तुम्हारी गुजर होजाय। वह सव तुम्हारा है ही। साथ ही दोनो को ५०–५० रुपया माह मै दूगा। तीन माह वाद तुम्हे अधेपन और लगडेपन का नाटक न करना पड़ेगा। उसके वाद भी तुम्हें कुछ काम दिया जायगा।

वे वोले– पचास रुपया वहुत थोड़ा होता है साहव।

सिनेमा के नट थोडी देर ही कुछ अभिनय करते है तो हजारों लाखो पीट लेते हैं। जब कि हमे तीन माह तक अधे लगडे का सफल अभिनय करना है। इसलिये सिर्फ पचास रुपये महीना बहुत थोडा है।

आदमी काफी चतुर चालाक मालूम हुए। मैंने समझाया कि हर चीज का मूल्याकन उससे मिलनेवाले लाभ पर निर्भर होता है। सिनेमा मे अभिनय करने पर जो निर्माताओ को आमदनी होती है उसके अनुसार अभिनेता लोग अपना पारि-श्रमिक वसूल करते हैं। यो वे ही अभिनेता यदि सडक पर अभिनय करे तो भीड मे से दो चार रुपये के पैसे के सिवाय कुछ न मिलेगा। एक गलीगायिका (स्ट्रीट सिंगर) गली गली में दिनभर गाकर पाच सात रुपये ही पासकेगी जब कि सिनेमा मे एक ही गीत के हजार पाच सौ लेलेगी। यह वास्तविक मूल्य नही है परिस्थिति का मूल्य है। तुम्हे सिनेमा के लिये काम नही करना है किन्तु एक ऐसे धर्मगुरु के लिये काम करना है जिसका काम लोगो का कल्याण करना है।

वे- हम लोग मूर्ख हैं महाराज, इसलिये यह समझ में नही आता कि हमारे ऐसे नाटक से लोगो का क्या कल्याण होगा। पर यह सब आप जाने, हमें आपकी आज्ञा पालने से मतलब, सो पूरी मिहनत से काम करेगे। पर मजूरी कुछ ज्यादा मिलना चाहिये। इस नकली जीवन मे कष्ट बहुत होगा महाराज!

मैंने सौ सौ रुपया माह तय कर दिया। इसके सिवाय भिक्षा मे जो मिलेगा वह उनका है ही। पर यह वेतन तीन

माह के लिये है। तीन माह के बाद यह नाटक समाप्त होजायगा। और यह नाटक समाप्त करने के लिये उन्हे क्या करना होगा यह समझा दिया।

तीन माह होगये। वे दोनो आदमी अंधे और लगड़े का नाटक बहुत अच्छी तरह से करते रहे। उन्हे भिक्षा काफी मिलजाती थी और लोग उन्हें सचमुच अंधा और लगड़ा समझते थे। आज उनका ठीक उपयोग होगया।

यज्ञ फिर होरहा था। सब तरह का ठाठ बाट था। हजारो की भीड़ थी। मै प्रवचन कर रहा था। अगर यज्ञ करानेवाला योगी हो, जनता में सच्ची भक्ति हो और ईश्वर की कृपा हो तो सब कुछ होसकता है।

भीड़ खूब थी। उसमें जहा तहा मेरे आदमी भी बैठे थे। जनता से मनचाही आवाज निकलवाने के लिये उन लोगो का वहा रहना जरूरी था। इतने मे वे ही अधे और लगड़े आये। वे भीड़ को चीरते हुए मेरी तरफ बढ़ रहे थे। जब वे कुछ ही दूर रहगये तब मैने कहा- इधर तुम लोग क्यो बढ रहे हो ?

वे- अपना उद्धार कराने के लिये महाराज !

मैं- भगवान की भक्ति करो, यज्ञ के गुण गाओ तुम्हारा उद्धार होजायगा। मैं क्या तुम्हारा उद्धार करूंगा ?

वे- सो तो करते ही हैं। पर आपके चरणो की रज पाये बिना भगवान की भक्ति भी सफल न होगी।

मैं- मेरी रज मे क्या रक्खा है ? धूल तो सभी समान है। अब तुम लोग वही बैठ जाओ !

वे– नही महाराज, इतनी कठोरता न वतलाइये आपकी चरण धूलि पाये बिना अब लौटनेवाले नही है । इतना कहते कहते वे मेरे बिलकुल पास आगये और अधा वना व्यक्ति मेरे पैर पकडकर पैर का अगूठा आखो से रगडने लगा ।

मैंने पैर खीचते हुए कहा– बस ! अव बहुत होगया ।

अधा– अभी बहुत नही हुआ महाराज, अभी बहुत बाकी है । अभी तो मुझे धु धला ही दिखाई देने लगा है । मेरी आखे पूरी तरह खुल जाने दीजिये । आपकी यह चरण धूलि ही मेरी आखो के लिये भगवान का अजन है ।

मैंने आश्चर्य प्रदर्शन का अभिनय करते हुए कहा– क्या तुझे दिखने लगा है ?

अधा– हा महाराज, पर पूरा पूरा नही, अभी धु धला धु धला दिखता है । इन पवित्र चरणो से आखे और मलने दीजिये जिसमें अच्छी तरह से दिखने लगे ।

यह कहकर वह मेरे पैर के अगूठे से अपनी आखे मलने लगा । और थोडी देर मे चिल्लाया – जय हो, जय हो, गुरुदेव की जय हो ! जिनकी चरण धूलि से एक अधे की आखे अच्छी होगईं । इसके वाद उसने जनता की तरफ नजर डाली । सब को हाथ जोडे । मुझे साष्टाग दंडवत किया । फिर भीड मे से इस प्रकार बचते हुए निकल गया जैसे देखने–वाला आदमी निकलता है । जनता भी मेरा जयजयकार करने लगी ।

इतने मे वह लगडा भी आगया जो तीन माह से सडको पर लंगड़ेपन का अभिनय करता था । लगडाते लगडाते मेरे

पास आने लगा। मैंने डाटते हुए कहा– अब तू क्यों आरहा है ?

लगडा– मुझ पर भी दया होजाय गुरुदेव !

मैं– मै क्या भगवान हू ? जा यहा से ।

लगडा– हम लोगो के लिये तो भगवान ही हैं। आपके चरण यदि मेरी लगड़ी टाग को छूदे तो मेरा भी उद्धार होसकता है गुरुदेव !

मैं– यह सब फजूल बात है । जो कुछ होता है भग-वान की कृपा से होता है । जा, भगवान का भजन कर ! जो कुछ करेगे भगवान करेगे, भगवान ही करेगे ।

लंगडा बोला– भगवान का भजन तो करूगा ही, पर आखो से दिखाई देनेवाले भगवान तो आप ही हैं ।

यह कहते हुए वह मेरे पास आगया। मैंने क्रोध का अभि-नय करते हुए उसे एक लात मारी और कहा– जा जा ! हटजा यहा से ! भगवान का अपमान करता है !

मेरी लात लगते ही लगडा भागा । उसका लगडापन दूर होगया था । जनता मे जय जयकार होने लगा । मेरे आदमी जनता में जहा तहा बैठे ही थे। उन्ही ने जोर जोर से जय जयकार करना शुरु किया और जनता दुहराने लगी। 'परम अवधूत की जय । अवधूत शिरोमणि की जय।' मेरा प्रभाव छागया।

पर मुझे भय था कि इस तरह तो कल से यहा अधो लगड़ो की भीड लगजायगी । और वे मेरी चरण रजसे ठीक न होगे तो सारे चमत्कार की पोल खुल जायगी। इसलिये मैंने कहा–

भगवान के भक्तो ! मनुष्य तो निमित्तमात्र है सारी कृपा भगवान की है । ऐसे चमत्कारो के लिये तीन बातो की जरूरत है । चमत्कारी व्यक्ति की साधना, यज्ञ सरीखा कोई पुनीत कार्य जिसमे जनता सच्चे दिलसे भागले, साथ ही बीमार व्यक्ति का पुण्य, इन तीन में से कोई एक भी कारण कम हुआ तो कार्य न होगा । मै तो भगवान का साधक हू ही, इसीलिये यह चमत्कार हो सका । पर आप लोग जिसप्रकार उदारता से, प्रेम से, यज्ञ मे भाग लेरहे हैं वह भी एक बडा कारण है जिससे यह चमत्कार हुआ । अगर आप लोगो के दिलमे यज्ञ के विषय मे असन्तोष होता, मन से पूरा सहयोग न होता तो भी यह चमत्कार न होता । फिर उन दोनो अधो लगडो की भगवान–भक्ति भी कारण थी । वे अगर सच्चे भक्त न होते तो भी यह चमत्कार न होता । अब आप समझ गये होगे कि इस चमत्कार का सारा श्रेय मुझे नही है । आप लोगो को भी है, उन अधो लगडो को भी है जो भगवान के सच्चे भक्त हैं ।

जनता में से आवाज उठी–धन्य है ! धन्य है ! जनता में छिपे हुए मेरे आदमी चिल्लाये–परम निस्पृही अवधूत महाराज की जय । सन्त शिरोमणि मायाराम जी की जय ।

इसप्रकार मैं कल के संकट से, पोल खुलने के सकट से ही न बचगया साथ ही परम निस्पृही रूप में पुज भी गया ।

जनता को इसप्रकार उल्लू बनाने में कुछ सकोच तो होता है पर क्या किया जाय । वह है भी इसी लायक ।

१५- प्रचार का चमत्कार

मेरी ठगी की दूकान दूकान ही नहीं रही है ठगी का बहुत बड़ा कारखाना या संस्थान बनगया हैं। खूब वैभव है, विलास है, चारों तरफ मौज ही मौज है। मैं तो इसका मूल हूं ही, वृक्ष मैंने ही लगाया है परन्तु मायादास ने भी इसमें बड़ा सहयोग किया हैं। उसने भरपूर पानी देकर वृक्ष को खूब बढ़ाया। और रुक्मिणी और किशोरी ने तो खात देकर इस वृक्ष के फल बड़े मीठे और रसीले कर दिये। एक तरह से मेरा जीवन खूब सफल है। मैं कृतकृत्य हूं। दुनिया से मैंने भरपूर बदला लिया हैं।

आज यही बात जब मैंने मायादास से कही तब वह बोला- कैसा बदला गुरुदेव !

मैंने कहा- एक दिन दुनिया को मैं सच्चाई देना चाहता था उसका कल्याण करना चाहता था। पर दुनिया ने मुझपर उपेक्षा की, आज लाखों आदमी मेरे गीत गाते हैं, लाखों रुपयों की भेंट चढ़ाते हैं परन्तु जब मैं सत्य देना चाहता था, दुनिया का कल्याण करना चाहता था तब मुझे कोई नहीं पूछता था। उंगलियों पर गिनने लायक आदमी भी मुश्किल से पासका था और उनसे भी इतना कम प्राप्त होता था कि गुजर भी नहीं होती थी। उस समय मेरा जीवन बड़ा पवित्र था, दम्भ रहित था पर दुनिया उपेक्षक थी, आलोचक थी, निन्दक थी। पर आज मेरा जीवन दम्भी है, विलासी है, ठग है, मैं दुनिया को खूब लूटता हूं, पुजता हूं। इसलिये बड़े बड़े नेता, धनी, विद्वान सब मेरा लोहा मानते हैं, प्रतिष्ठा

करते हैं। ऐसी दुनिया पर मुझे दया आने के बदले क्रोध आता है। ऐसा लगता है कि दुनिया को और भी अधिक ठगूं और भी अधिक लूटूं। यह कमबख्त इसी लायक है।

मायादास– तो और भी कोई योजना है गुरुदेव !

मैं– योजनाओं की क्या कमी ? दुनिया को ठगने के लिये, उससे धन यश प्रतिष्ठा लूटने के लिये अभी बहुत से कार्य-क्रम हैं। इससे हम अपने विशिष्ट सेवकों को कुछ काम भी देसकेंगे। और उन्हें खिलाने पिलाने के लिये भरपूर पैसा भी प्राप्त कर सकेंगे।

मायादास– पैसे की तो अभी भी कोई कमी नहीं है और सेवक भी बहुत से काम में लगे हैं गुरुदेव !

मैं– पर उन्नति की कोई सीमा तो है नहीं, न यश प्रतिष्ठा की सीमा है। फिर इस मूढ़ जनता को मूढ़ता की जितनी भी सजा दीजाय उतनी कम ही है।

मायादास– बहुत ठीक गुरुदेव ! तो बोलिये पहिले क्या कार्य किया जाय ?

मैं– मेरा विचार हजारों आदमियों की सेना इकट्ठी करने का है। एक ऐसा पेम्फलेट बांटा जाय जिससे ऐसी बातें छपी हों कि जो परीक्षा में पास होना चाहते हों, व्यापार में खूब मुनाफा उठाना चाहते हों, असाध्य बीमारियों से भी मुक्त होना चाहते हों, अपनी प्रेमिका या प्रेमी को वश में करना चाहते हों, अच्छी नौकरी पाने में सफल होना चाहते हों, मुकद्दमा जीतना चाहते हों, सन्तान न हो इसलिये सन्तान चाहते हों, चुनाव जीतना चाहते हों, मिनिष्टर बनना चाहते

हों फसल में अच्छा उत्पादन चाहते हों, फसल के अच्छे दाम चाहते हों, शादी में अच्छा दहेज चाहते हों, सरकार की तरफ से विदेश यात्रा का अवसर चाहते हों उनको गुरुदेव का आशीर्वाद लेकर कल्याण–यात्रा में शामिल होना चाहिये। कल्याण यात्रा जितनी दूर की जायगी उतना ही अधिक फल होगा। यात्रा पैदल होना चाहिये। साइकिल पर यात्रा को भी पैदल यात्रा समझा जायगा। यह यात्रा गुरुदेव का झंडा लेकर अकेले भी की जासकती हैं पर जितना अधिक समुदाय होगा उतना ही अधिक फल होगा।

मायादास– इस पेम्फलेट के छपने से क्या लोग आयेंगे?

मैं– इतने अधिक आयेंगे कि जगह न मिलेगी। इस देश की मूढ़ जनता की एक मनोवृत्ति यह है कि उसके मनमें झूठी से झूठी आशा पैदा कर दो वह उस ओर दौड़ पड़ेगी। वह सोचती है–थोड़ा सा खर्च करने में या थोड़ा श्रम करने में क्या हानि हैं? सम्भव है कुछ हो जाय। न होगा तो अपना बहुत बड़ा नुकसान नहीं है। थोड़ी सी भेंट चढ़ाने में क्या हर्ज है। थोड़ी सी यात्रा करने में क्या हर्ज है? कुछ न कुछ लाभ हो ही जायगा। बस इस तरह आदमी इकट्ठे होने लगते हैं। और जहां सौ पचास आदमी जुड़े कि फिर भीड़ लगने लगती है। फिर लोग यह भी सोचने लगते हैं कि जब इतने आदमी जाते हैं सो कुछ न कुछ होगा ही। यह सोचकर सौ को देखकर हजारों आने लगते हैं और हजारों को देखकर लाखों की भीड़ लग जाती है। इस–देश की जनता को ठगना बहुत सरल है। क्योंकि इसमें

मूढ़ता तो है ही पर हरामखोरी इससे ज्यादा है। हर आदमी बिना योग्य परिश्रम किये किसी चमत्कार से सब कुछ पाना चाहता है। ऐसी अवस्था में चमत्कार का प्रचार कर रहे लोग आयेंगे। यहां तक कि अगर किसी को आदमी न मिले तो वह एक दिन भाड़े से आदमी बुलाकर भीड़ का प्रदर्शन करदे तो दूसरे दिन से बिना भाड़े के सैकड़ों आदमी आने लगेंगे। सबसे सस्ता और सबसे अधिक मुनाफे का है यह धंधा। और धंधों में सिर्फ पैसा कमाया जाता है पर इस धंधे में पैसा तो अनगिनत आता ही है पर यश प्रतिष्ठा भी असीम आती है। इस सफलता से कल तुम अपने को भगवान कहलाना चाहो तो लोग तुम्हें भगवान कहने लगेंगे। अन्य किसी धंधे में ऐसी प्रतिष्ठा नहीं मिल सकती।

मायादास– बहुत ठीक गुरुदेव, इसमें पूरी सफलता मिलेगी। पर एक बात से मुझे हंसी आगई। आपने यह घोषणा भी करवाई है कि मिनिष्टर बनना चाहते हो तो उन्हे भी सफलता मिलेगी। मिनिष्टर बननेवाले लोग अच्छे पढ़े लिखे होते हैं वे भी क्या इस चक्कर में आसकेंगे?

मैं– मिनिष्टर बननेवालों में क्या कम गधापन होता है? वे राजनीति में ठगी का धंधा करना जानते हैं पर धर्म और अन्धश्रद्धा के मामले में तो वे ऐसे ही मूर्ख होते हैं जैसी आम जनता मूर्ख है।

मायादास– लेकिन क्या पेम्फलेट में कही गई बातें सच निकल आयगी।

मैं– सच निकलने से क्या मतलब? कुछ अपने भक्त

आदमी भीड़ में छोड़ दिये जायंगे जो कहेंगे कि पहिले मेरी ऐसी दुर्दशा थी पर गुरुदेव के आशीर्वाद से ऐसा होगया। जिस खेत में पहिले कुछ नहीं होता था अब मेरे खेत में चौगुना पैदा होने लगा। हमारी पड़ौसिन के ४० वर्ष की उम्र तक सन्तान नहीं हुई थी पर अब होगई। हमारे पड़ौसी को केन्सर था पर अब अच्छा होगया। इस तरह चारों तरफ अपने भाड़ेतू आदमी छोड़ दिये जायंगे जो झूठी सफलता के गीत गायेंगे। फिर सभी लोग विश्वास करने लगेंगे। फिर थोड़ी बहुत सफलता तो किसी न किसी को मिलती ही है। कोई परीक्षा से पास होता है, किसी को नौकरी मिलती है, कोई बीमारी में अच्छा होता है। बस, स्वाभाविक रूप में मिलनेवाली इन सफलताओं का श्रेय अपने आशीर्वाद को मिलेगा। फिर जो रह जायंगे उनके बारे में लोग यही सोचेंगे कि इनने मन से भाग नहीं लिया होगा, श्रद्धा में कमी होगी इसलिये इन्हें फल नहीं मिला। सफलताओं के प्रचार में असफलताओं का रोना कौन सुनता है असफलता की चिन्ता जरा भी न करना चाहिये। यह मूढ़ और अन्धश्रद्धालु समाज असफलताओं की बातें सुनना भी नहीं चाहता। बल्कि असफलताओं के समाचारों पर ही अविश्वास करता है।

मायादास को पूरा सन्तोष होगया था। और मेरी योजना को अमल में लाने के लिये उसने बहुत अच्छे ढंग से काम किया। अब मेरा आशीर्वाद लेने सैकड़ों आदमी हर दिन आते हैं। कोई एक रुपया कोई पांच दस रुपया और कोई १०० रु. का नोट भी चढ़ाते हैं। हर दिन हजारों रुपया

आजाता है। फिर ये लोग यात्रा पर निकलते हैं। गांव गांव समूह बनाकर मेरा जय जयकार करते हुए जाते हैं। और ये अक्ल की दुम बननेवाले नवयुवक सैकड़ों की संख्या में साइकिलों पर सवार होकर मेरा जय जयकार करते हुए गांव गांव घूम रहे हैं। सोचते हैं मेरे आशीर्वाद से ये पास होजायंगे। अच्छी नौकरी पाजायंगे और कल मिनिष्टर भी बन जायेंगे। गधे कहीं के!

मैंने एक पेम्फलेट और निकाल दिया है। उसमें लिख दिया है कि मेरे नाम की यात्रा करनेवाले लोगों को जो ठहरायेंगे भोजन करायंगे उनको हर तरह का सुभीता देंगे उन्हें भी इन यात्रियों से आधा फल मिलेगा।

इस घोषणा का परिणाम यह हुआ है कि मेरा जय जयकार करनेवाले यात्री जहां जाते हैं वहां लोग उनका आदर करते हैं, उन्हें अच्छे ढंग से ठहराते हैं, अच्छा भोजन कराते है। इससे यात्रियों में मेरा प्रभाव और बढ़ता है।

फिर मैंने यह भी घोषणा कर दी कि जो लोग श्रद्धा से मेरे यात्रियों के दर्शन करेंगे उनको भी यात्रियों को मिलनेवाली सफलता का चौथाई मिलेगा। और अष्टमांश तो उन्हें भी मिलजायगा जो बिना श्रद्धा के भी दर्शन करेंगे।

इस प्रकार मेरे यात्री जहां भी जाते है वहां दर्शन करनेवाले कतार बांधकर खड़े होजाते हैं। यह भी मेरा चमत्कार है।

सोचता हूं मैं यदि सत्यनिष्ठ बना रहता दुनिया का सच्चा हितैषी बना रहता तो यह सब कहां से मिलता।

आज मैं अपनी चतुराई का खूब फल पारहा हूं और दुनिया भी अपनी मूर्खता का फल पारही है। उसका धन लुटता है, श्रम लुटता है, समय लुटता हैं, गौरव लुटता है। सो लुटने दो कमबख्त को। सत्यनिष्ठों पर उपेक्षा करने का पाप उसका कुछ कम नहीं है।

१६– सम्भोग समाधि

श्री कृष्ण को पूर्णावतार मानकर गोपी लीला और राधाकृष्ण लीला की ओट में जो व्यभिचार लीला मैंने कराई है वह चल तो रही है अच्छी तरह, फिर भी कुछ लोग इसकी निन्दा करते ही हैं। जनता कैसी भी हो पर सम्भोग और व्यभिचार को वह धर्म का अंग मानने के लिये तैयार नहीं है, भले ही उसके समर्थन में कुछ श्लोक सुना दिये जायं, धर्म-शास्त्रों की कहानियां भी समर्थन में पेश कर दी जायं। इस-लिये आज मैंने इसे गम्भीर दार्शनिक रूप देने का विचार किया। और अध्यात्म, योग, मोक्ष, समाधि, परमधर्म आदि की छाप इस पर मारी।

आज कुछ सम्भ्रान्त व्यक्तियों के सामने मैंने कहा कि जगत को नीति की जितनी जरूरत है उससे अधिक जरूरत है धर्म की, ऐसे धर्म की जो जीवन को परमानन्द प्रदान कर दे। परम आनन्द वंही है जिसमें कोई विकल्प न रहे। इस निर्विकल्प अवस्था में दुःख का भी विकल्प न रहेगा, आत्मा आत्मा में लीन होजायगा। इस तरह मन की शून्यावस्था होजा-यगी। यही तो समाधि है जिसे ध्यान द्वारा प्राप्त किया जास-कता है। उस अवस्था में अहंकार नष्ट होजाता है। और

अहंकार ही तो सारे दुःखों की जड़ है। हम अहंकार को मारें, विकल्प दूर करें, अपने को शून्य अवस्था में लेजायं, कर्तृत्व का भान भूल जायं यही परमानन्द है। मैं इसी की साधना आप लोगों को कराना चाहता हूं और उसे जीवन में उतर–वाना चाहता हूं। आप कितने भी नैतिक बनें, ईमानदार बनें, सत्यवादी बनें, परोपकारी बनें पर ये सब बहुत छोटे धर्म होंगे, इनसे वह परमानन्द आपको प्राप्त न होगा जो मैं ध्यान के द्वारा, समाधि के द्वारा, शून्यता के द्वारा प्राप्त कराउंगा।

एक श्रोता ने कहा– उस आनन्द की कल्पना भले ही करली जाय पर वह अनुभव में तो आ नहीं सकता।

मैं ऐसे ही प्रश्न की बाट देख रहा था। इसलिये इस प्रश्न से मुझे बहुत प्रसन्नता हुई। तब मैंने कहा– यह अनुभव हर एक आदमी कर सकता है और करता है। समाधि का सुलभ और प्रारम्भिक रूप है सम्भोग। सम्भोग का आनन्द परमानन्द है। जिस समय वह आनन्द आता है उस समय मनुष्य की अवस्था में अहंकार नहीं रहता, वह अपने को भूल जाता है। उसका अहं समाप्त होजाता है। वह निर्विकल्प अवस्था में पहुंच जाता है, शून्य होजाता है। यही तो समाधि का अनु–भव है। सम्भोग के अनुभव से ही मनुष्य उत्कृष्ट समाधि तक पहुंचता है। पहिले तो ध्यान के प्रयोग से मनुष्य की सम्भोग शक्ति बढ़ती है। वह साधारण मनुष्य की अपेक्षा दस पांच गुणे अधिक समय तक सम्भोग कर सकता है। और धीरे धीरे यह आनन्द बिना सम्भोग के भी प्राप्त होने लगता है। इस–प्रकार मनुष्य सम्भोग में निष्णात होकर पूर्ण समाधि तक पहुंच

जाता है। सम्भोग भी समाधि है परन्तु वह अल्पसमय की है। उसकी मात्रा वढ़ते बढ़ते मनुष्य दीर्घकालीन समाधि तक पहुंच जाता है। सम्भोग उसका प्रारम्भिक प्रयोग है जो इस प्रयोग में सफल नहीं होते वे समाधि तक नहीं पहुंच पाते।

मैंने चारों तरफ नजर डाली। लोगों की आंखों में एक उत्सुकता और आनन्द नजर आया। मेरी मोहिनी उनपर पड़ रही थी। फिर भी उसका रंग उड़ न जाय इसलिये मैंने एक जबर्दस्त तर्क भी दिया।

मैंने कहा– जगत में सब से ऊंचा धर्म क्या है? प्रेम, प्राणिमात्र में अभिन्नता। यही तो ब्रह्म का साक्षात्कार है। जब अनेकता में एकता का अनुभव होता है तभी तो मनुष्य ब्रह्मदर्शी योगी ज्ञानी बनता है। और सम्भोग ही तो वह अवस्था है जिसमें अनेक मिलकर एक होजाते हैं, पूर्ण एकता का अनुभव करते हैं। ऐसी एकता का अनुभव सम्भोग के सिवाय और कहां होसकता है? इसीलिये तो शास्त्रकारों ने सम्भोग के आनन्द को ब्रह्मानन्द सहोदर कहा है। इसी-लिये तो मैं कहता हूं कि जिनने इस परमानन्द का, इस ब्रह्मानन्द का अनुभव नहीं किया वे समाधि का अनुभव तो क्या करेंगे, उस दिशा में वढ़ भी नहीं सकते?

एक श्रोता ने पूछा– भगवन्, फिर आप समाधि में निष्णात कैसे होगये? आपने तो कभी सम्भोग किया ही नहीं, आप तो अविवाहित हैं, वाल ब्रह्मचारी हैं।

मैं मन ही मन हंसा– इन गधों को क्या मालूम कि सम्भोग का जितना आनन्द मैंने लूटा है उतना तो इनकी

सात पीढ़ीने भी न लूटा होगा । ये एकाध औरत के साथ ही सम्भोग कर पाते हैं और फिर विवाह की जिम्मेदारियों से दब जाते हैं जब कि मैं एक से एक बढ़कर नई नवेलियों से सम्भोग करता हूं । हर बार समाधि का नया नया मजा आता है और फिर विवाह की कोई जिम्मेदारी नहीं । न बाल-बच्चों की चिन्ता, न किसी औरत के साथ बफादारी की चिन्ता । मैं युवतियों को समाधि का पाठ पढ़ाता हूं और पाठ पढ़ाने की फीस वसूल करता हूं । मेरे लिये चिन्ता की बात क्या है। पर ये सब बातें कहने की नहीं थीं । क्षणभर में ही ये भाव मनमें घूमगये और यह क्षण भी मैंने मुसकराहट बिखेरने में लगाया, जैसे किसी बच्चेने नादानी से भरा हुआ प्रश्न पूछ दिया हो ।

मैंने मुसकराहट बिखेरते हुए ही कहा- आत्मा अमर है उसका अनुभव भंडार एक ही जन्म का नहीं अनेक जन्मों का होता है। यह ठीक है कि हर एक आदमी को पूर्व जन्म के अनुभवों का पता नहीं होता। जो योगी होता है, सिद्ध होता है, उसे ही होता है । मुझे पूर्व जन्म के सम्भोग का इतना अनुभव है और वह ऐसा स्पष्ट है, कि मानों पिछली रात ही सम्भोग किया हो। यह दिव्यता हर एक को नहीं मिलती।

फिर एक ने पूछा- फिर आपको पाठशालाओं में क्यों पढ़ना पड़ा । सुना है कि आपने कालेज का उच्च शिक्षण भी पाया है और पढ़ाते भी रहे हैं ? इसकी क्या जरूरत थी ? पूर्व जन्म की स्मृति से ही आप यह सब प्राप्त कर-सकते थे ।

इस प्रश्न से मैं जरा घबराया जरूर, परन्तु तुरन्त मुझे यही उत्तर सूझा कि— मेरे पूर्व जन्म में शिक्षण की यह प्रणाली कहां थी ? आधुनिक विषयों का शिक्षण तो मुझे इसी जन्म में लेना पड़ा।

प्रश्नकार ने कहा आधुनिक शिक्षण तो करीब सौ वर्ष से चल रहा है जब कि आप तो पचास के भी नहीं हैं। आपके पूर्व जन्म में भी यह सब शिक्षण था। थोड़ा कम भी होगा तो उतना तो आप जन्म के साथ लाते।

तब तक मैं सम्हल गया था। घबराहट पर मुसकराहट पोत सका था। मैंने कहा— इस स्कूली कचरे ज्ञान को तुम ज्ञान कहते हो ? इस कचरे की क्या जीवन पर इतनी छाप पड़ सकती है कि उसके संस्कार परलोक तक जांय ? यह सब कचरा तो मरने के साथ धुल जाता है। साथ में सिर्फ जाते हैं समाधि के संस्कार। और सम्भोग समाधि का प्रथम और आवश्यक रूप है इसलिये उसके संस्कार मरने के बाद भी बने रह सकते हैं।

तब सभी को ये संस्कार क्यों नहीं होते ?

मैं— इसीलिये कि सभी लोग सम्भोग को समाधि के अंग के रूप में कहां देख पाते हैं ! धर्मशास्त्रकारों ने मनुष्यों को ऐसा गुमराह कर दिया है कि वह सम्भोग को पाप समझने लगा है। वह सम्भोग में समाधि का या योग का अनुभव नहीं करता, उसे पाप समझता रहता है, इसलिये उसके अन्तर्मन में सम्भोग से एक तरह की घृणा भरी रहती है। इस-लिये लज्जा भय उतावली आदि भी होती है। इसका फल

यह होता है कि जो सम्भोग निर्विकल्पक समाधि का प्रारम्भिक रूप बनसकता है, प्रेम का अनुभव करा सकता है अन्त में शून्यता लासकता है वह सम्भोग एक तरह की चोरी बन जाता है, भय लज्जा का कारण बनजाता है। तब यह भी कचरा बनजाता है। भला ऐसे कचरे के संस्कार दूसरे जन्म तक क्या जायंगे ! मैंने पहिले जन्म में भरपूर सम्भोग किया है और बिना किसी भेदभाव के किया है। मैं ब्रह्म का उपासक रहा हूं। भेदभाव का मेरे पास कोई काम नहीं रहा। इसलिये इस समाधि का प्रयोगात्मक पाठ मैंने सैकडों महिलाओं को पढ़ाया है ! सब में ब्रह्मानन्द का, अहंकार शून्यता का, समाधि का अनुभव कराया है। यही कारण है कि सम्भोग की एक एक बात का, विभिन्न प्रकारों का मुझे पूर्ण अनुभव है। इसलिये इस जन्म में सम्भोग किये बिना ही मैं समाधि तक पहुंच गया हूं। पर साधारण लोग ऐसा नहीं कर सकते, उन्हें किसी न किसी तरह सम्भोग करना अनिवार्य है, इसके बिना वे पूर्ण समाधि तक नहीं पहुंच सकते। मैंने ब्रह्मविहार की योजना इसीलिये की है कि मनुष्य समाधि का परमानन्द पासके। भले ही ब्रह्मविहार ऊपर से व्यभिचार का तांडव दिखाई देता हो परन्तु वास्तव में वह अभेद की, प्रेम की साधना है इसलिये ब्रह्मविहार है।

एक ने पूछा— पर भगवन्, इस विषय में मनुष्य के मनमें जो लज्जा है उसे जीतने के लिये किया जाय ?

मैंने कहा— यह लज्जा पाप है। इसका त्याग करना ही चाहिये। इसका सब से अच्छा उपाय है वस्त्र का त्याग,

नग्न जीवन । जब हम कपड़े पहिनते हैं तब इसका अर्थ यह कि हम स्त्रीत्व को या पुरुषत्व को पाप समझते हैं इसीलिये उसे छिपाते हैं । कपड़े पहिनना न प्राकृतिक जीवन है न ईश्वरीय जीवन । यदि कपड़ा आवश्यक होता तो क्या प्रकृति या परमात्मा मनुष्य को कपड़े सहित पैदा न करता ! संसार का कोई भी अन्य प्राणी क्या कपड़े पहिनता है ?

उसने कहा– नहीं पहिनता, न मनुष्य के सिवाय किसी प्राणी में विवाह होता है, न पतिपत्नी सम्बन्ध होता हैं। ऐसी अवस्था में तो वैवाहिक जीवन का भी त्याग करना उचित होगा । पर क्या इससे एक तरह का नरक न बनजायगा ।

मैंने कहा– तो तुम विवाह को स्वर्ग कहते हो ? जो विवाह प्रेम का कब्रिस्तान है वह क्या जीवन का स्वर्ग कहा जासकता है ?

उसने पूछा– विवाह प्रेम का कब्रिस्तान कैसे ?

मैंने कहा– विवाह मनुष्य तभी करता है जब प्रेम पर अविश्वास होता है । प्रेम पर विश्वास हो तो विवाह करे ही क्यों ? पैसे के देन लेन में लिखा पढ़ी तभी तो होती है जब एक दूसरे पर विश्वास नहीं होता । विवाह भी कानूनी लिखापढ़ी है जो इस बात का सूचक है कि एक दूसरे को एक दूसरे के प्रेम पर विश्वास नहीं है । जहां प्रेम में विश्वास ही न हो वहां प्रेम का कब्रिस्तान न होगा तो क्या होगा ? वहां प्रेम न होगा, प्रेम की लाश होगी ।

उसने पूछा– प्रेम को जीवित रखने के लिये क्या यह स्वतंत्रता जरूरी है ?

मैंने कहा– स्वतंत्रता के बिना क्या कोई मनुष्य जीवित रह सकता है ? और जीवित रहता है तो क्या सचमुच जीवन होता है ? क्या वह चलती फिरती लाश नहीं होता ? प्रेम पर अविश्वास होने से जब स्त्रीपुरुष विवाह के बन्धन में बंधते हैं तब क्या उनका मन भी बंध जाता है ? विवाह के पहिले तक दुलहिन का आकर्षण रहता है और विवाह होने पर मन दूसरे पर जाने लगता है । बन्धन आया कि मुक्ति की लालसा आई ।

दूसरे ने पूछा– यदि विवाह की प्रथा न रहे तब स्त्री को जब गर्भ रहजायगा तव उसकी सम्हाल कौन करेगा ? पुरुष तो स्वतंत्र होजायगा पर नारी तो गर्भ धारण के कारण संकट में पड़जायगी ।

मैंने कहा– ये समस्याएं कोई बड़ी समस्याएं नहीं हैं। मनुष्येतर प्राणियों में मादा जब गर्भवती होती है तब वह अपने दम पर अपनी और अपने बच्चों की समस्या हल कर लेती है । मनुष्य में यह समस्या इसलिये पैदा होगई कि मनुष्य को धर्मशास्त्रियों ने बन्धन में रहने की आदत डालदी है । पर इसकी आदत पड़ने पर भी इसका उपाय है । गर्भ–वतियों की व्यवस्था राज्य उठा लेगा । यह आर्थिक समस्या है जिसे समाज या राज्य किसी न किसी तरह हल करेगा । इसकेलिये धर्म को और समाधि के मोक्ष को नष्ट नहीं किया जासकता ।

उसने पूछा– विवाह बन्धन टूटने से धर्म और मोक्ष का क्या सम्बन्ध हैं ?

मैंने कहा– प्रेम ही तो धर्म है। प्रेम में भेदभाव नहीं होता, वह संकुचित नहीं होता। वह बन्धन भी नहीं होता। वह स्वतंत्र होता है, उन्मुक्त होता है। प्रेमी एक से प्रेम करे दूसरे से न करे यह सम्भव नहीं है। प्रेम तो व्यापक है। विवाह इस व्यापकता को नष्ट करता है।

उसने कहा– पर जब तक गर्भवतियों की जिम्मेदारी समाज ने या राज्य ने नहीं ली तब तक विवाह आवश्यक तो है ही।

मैंने कहा– जब तक विवाह है तब तक समाज को या राज्य को गर्भवतियों की जिम्मेदारी लेने की जरूरत कैसे मालूम होगी? वह तो तभी होगी जब समस्या सामने आजा–यगी। फिर भी जिनको विवाह की जरूरत मालूम होती हो वे विवाह करलें। पर उसे आर्थिक व्यवस्था समझें। धर्म का, काम का और मोक्ष का उससे कोई सम्बन्ध नहीं। उसे प्रेम का वन्धन न समझें। प्रेम जहां बन्धन में पड़ा, मेरे तेरे के चक्कर में पड़ा कि प्रेम नष्ट हुआ, न वह धर्म रहा, न काम, न मोक्ष। तीनों पुरुषार्थों का नाश हुआ। इन तीनों के लिये स्वतंत्रता जरूरी है। मैंने ब्रह्मविहार की योजना इसीलिये खड़ी की है कि जो लोग आर्थिक दृष्टि से दाम्पत्य जीवन से बंधे हुए है वे बंधे रहें पर धर्म काम मोक्ष की दृष्टि से स्वतंत्रता से ब्रह्मविहार करें।

एक ने पूछा– स्वतन्त्रता से ब्रह्मविहार कैसा?

मैंने कहा– कुछ समय को भूल जाओ कि आप पति–पत्नी हैं। अंधेरे में सब स्त्रीपुरुष इकट्ठे होजाओ! नग्न

होजाओ ! फिर ब्रह्मविहार करो । जिसको जिससे सम्भोग करना हो करो । भेदभाव का कोई काम नहीं ।

मृत्योः स मृत्युमाप्नोति य इह नानेव पश्यति । जो नानात्व देखता है अर्थात भेदभाव रखता है उसे मौत मिलती है । बस ! प्रेम करो ! सब से प्रेम करो ! प्रेम ! प्रेम ! प्रेम !! इसमें उतावली न करो । बहुत आराम से सम्भोग करो । तन्मयता से सम्भोग करो । धीरे धीरे सांस लो, जल्दी जल्दी सांस लेने से सम्भोग लम्बे समय तक न होगा । आधा घंटे से अधिक तक जो सम्भोग कर सकेगा वह समाधि के निकट पहुंचेगा । यह काम का आनन्द तो है ही, पर मोक्ष का भी आनन्द है । इसीलिय संस्कृत कवियों ने कहा है ।

"नीबिमोक्षो हि मोक्षः"

अर्थात् नारी की साड़ी की गांठ छोड़ना ही मोक्ष है । इस-प्रकार उनने सम्भोग के लिये कपड़े के छोड़ने को, कपड़े के मोक्ष को मोक्ष कहा है । आप मेरी बताई हुई समाधि की साधना करेंगे तो काम और मोक्ष दोनों का भरपूर आनन्द मिलेगा ।

सम्भोग के विरोध में धर्मशास्त्रियों ने जो लिखा है वह उनकी निर्बलता का परिणाम है । इस निर्बलता पर हमें विजय प्राप्त करना है । सम्भोग का रहस्य समझना है । स्त्री पुरुष में जो कामातुरता है वह दिखने में शारीरिक है पर वास्तव में उसका मुख्य लक्ष्य शारीरिक नहीं, आध्या-त्मिक है । उससे अहंकार-शून्यता आती है, काल-शून्यता आती है, यही तो समाधि है, इसीसे तो आत्मा में परमात्मा की झलक मिलती है ।

आपको ब्रह्मविहार करके सम्भोग में निष्णात होना है इसके बाद आपको सम्भोग की जरूरत न पड़ेगी। जहां मैं सम्भोग समाधि का प्रेरक हूं, पथ प्रदर्शक हूं, वहां मुझ से बढ़कर सम्भोग का कोई दुश्मन न होगा। मैं सम्भोग में निष्णात करके सम्भोग का त्याग कराना चाहता हूं। इसी-लियें ध्यान का अभ्यास कराना चाहता हूं। ध्यान और मौन जीवन में अनिवार्य है। बोलने की जरूरत नहीं है, ध्यान की जरूरत है। ध्यान से ही आप जान सकेंगे कि कामा-वस्था की अनुभूति किस प्रकार कामातीत है।

एक भाई बोले– जब तक ध्यान के विषय का पता न हो तब तक ध्यान किस पर केन्द्रित किया जाय। शून्य का तो ध्यान होता नहीं। क्या शून्य की गोल आकृति ध्यान में लाई जाय? पर उस गोल आकृति पर भी कब तक ध्यान लगेगा? और उसमें क्या आनन्द आयगा?

मैंने हंसकर कहा– गोल आकृति का ध्यान नहीं करना है, किसी तरह के शून्य का ध्यान नहीं करना है, किन्तु ध्यान में शून्य बनजाना है। उसमें इस प्रकार तन्मय होजाना है कि उसमें काल का भान ही न रहे, अपने अहं का भान ही न रहे और असीम काम का आनन्द आता रहे। काम जब ध्यान में आजाता है, समाधि में आजाता है तब असीम होजाता है। तुम लोगों ने मत्स्येन्द्र नाथ की कथा सुनी होगी। मत्स्येन्द्र नाथ एक रानी के राज्य में पहुंच गये। उसके बाद वहां वे नाना तरह के भोग भोगते हुए बहुत समय तक रहे। उनके शिष्य गोरखनाथ ने उनका उद्धार किया और वे अपने

गुरु को आश्रम में लाये । और अन्य शिष्यों से बड़ाई मारने लगे कि मैंने अपने गुरु का उद्धार किया । रानी के चंगुल से उन्हें छुड़ाकर लाया । शिष्य हंसने लगे और गोरखनाथ को पागल समझने लगे । उनने कहा– गुरुदेव तो बहुत समय से बाहर ही नहीं गये वे तो समाधि में लीन हैं । और सचमुच गोरखनाथ ने देखा गुरु समाधि में लीन हैं ।

इस कथा का रहस्य क्या है ? इसका रहस्य है सम्भोग से समाधि या काम से समाधि, अर्थात् समाधि में सम्भोग या काम । तुम ध्यान करो और उसमें इतने तन्मय होजाओ कि ध्यान में असीम सम्भोग कर सको । सम्भोग में जो अहंकार–शून्यता और काल–शून्यता आती है वह समाधि में आयगी । जब तुम सम्भोग में निष्णात होजाओगे तब सम्भोग के बिना ही ध्यान और समाधि द्वारा असीम सम्भोग का आनन्द लूटने लगोगे । शारीरिक सम्भोग की अपेक्षा मानसिक सम्भोग टिकाउ होता है । शारीरिक सम्भोग में कुछ ग्लानि भी आसकती है, वह शीघ्र समाप्त होजाता है पर मानसिक सम्भोग रात दिन चलसकता है । उसमें सम्भोग्य व्यक्ति की जरूरत नहीं रहती । इसीलिये तो एक कवि ने कहा है:–

संगम विरह विकल्पे वरमिह विरहो न संगमस्तस्याः
संगे सैव ममैका विरहे खलु तन्मयम्भुवनम् ॥

प्रेयसी के मिलन और विरह में विरह ही अच्छा । क्योंकि मिलन में वह एक तरफ ही दिखाई देती है और विरह में तो सारा संसार उसी से भरजाता है । सब जगह वही वही दिखाई देती है । ध्यान और समाधि का ही वह रसीला

चित्रण है ।

तुम लोग इसे श्रृंगार रस का काव्य समझते होगे। पर परम निवृत्तिवादी जैनधर्म भी इसकी गवाही देता है। जैन धर्म में वतलाया गया है कि उसके १२ या १६ स्वर्गों में ऊंचे ऊंचे स्वर्गों में सुख अधिक है। परन्तु शारीरिक सम्भोग सिर्फ प्रारम्भ के दो स्वर्गों में है। वाद के लिये कहा गया है कि "शेषा स्पर्श रूप शव्द मनः प्रवीचाराः।" अर्थात् वहां सम्भोग आलिंगनादि से, उसके वाद सिर्फ रूपदर्शन से, उसके बाद शव्द श्रवण से और अन्त में मन से सम्भोग होता है। वे देव देवी सव से अधिक सुखी हैं जो मन से सम्भोग करते हैं। क्योंकि मन के सम्भोग के लिये किसी सम्भोग्य (जिसके साथ सम्भोग करना हो) की उपस्थिति की जरूरत नहीं रहती। अकेले में ही होजाता है। यह सव ध्यान और समाधि की वदौलत। जैन शास्त्रों का कहना है कि मन से सम्भोग करने वाले देवताओं के ऊपर वे देव हैं जिन्हें इस मानसिक सम्भोग की भी जरूरत नहीं रहती। जैन शास्त्रों का यह वर्णन कल्पित है, इसे भौगोलिक आधार नहीं है, परन्तु परम निवृत्तिवादी जैनधर्म का यह सारा कल्पित पाठ्यक्रम मैंने प्रत्येक मनुष्य के इसी जीवन में लाने की कोशिश की है। इसका प्रारम्भ ब्रह्मविहार से होता है और अन्त निर्विकल्प समाधि में। ब्रह्मविहार में मनुष्य सव तरह के सम्भोगों में निष्णात होता है। फिर वह सारे सम्भोग ध्यान और समाधि में भोगता है। अन्त में वह इतना तन्मय होजाता है कि उसमें वितर्क और विचार भी नहीं रहता। वह निर्विकल्प समाधि में

पहुंच जाता है। इस प्रकार ब्रह्मविहार का कार्यक्रम, उन्मुक्त सम्भोग का कार्यक्रम, निर्विकल्प समाधि का प्रवेशद्वार है, परम धर्म का अंग है। ईमानदारी सच्चाई सेवा आदि नीतियां इसके आगे बहुत छोटी हैं क्योंकि परमानन्द प्रदान नहीं कर-सकतीं। परमानन्द प्रदान करता है मेरा परम धर्म, जो ब्रह्मविहार से शुरु होकर निर्विकल्प समाधि तक जाता है। इस-लिये ब्रह्मविहार को आप लोग किसी तरह की भ्रष्टता न समझें किन्तु परमधर्म की भूमिका समझें, प्रवेशद्वार समझें। इसके बिना परम धर्म प्राप्त नहीं होसकता।

मेरे इस वक्तव्य से सभी श्रोता गद्गद होगये। मनुष्य की सहज प्रवृत्ति जो सम्भोग है उसकी सारी मर्यादाएं तोड़कर भी जिसप्रकार उसपर आध्यात्म की, परम धर्म की छाप मारी गई उससे सम्भोग विषय में लोगों का संकोच लज्जा तथा मर्यादा का भान दूर होगया। पाप समझकर वे जो व्यभिचार आदि से डरते थे वह डर उनका दूर होगया। इसकी खुशी में उनने मुझे भगवान बना दिया। भगवान मायाराम जी की जय के नारे लगने लगे।

१७– पर्दे के पीछे

मायादास ने आकर मुझे प्रणाम किया और बोला– भग-वन्, आज तो आपने गजब कर दिया। पाप को, व्यभिचार को, आपने इतने सुगंधित फूलों से ढकदिया कि अब वहां कोई पाप की आशंका भी नहीं करेगा।

मैंने हंसकर कहा– लोगों का गधापन क्या तुम पर भी सवार होगया ?

मायादास– इसमें लोगों का गधापन क्या है ?

मैं– आदमी को भगवान कहने लगना क्या कम गधापन है ! हमारे द्वारा जिस विश्व का पार भी नहीं पाया जासकता उस विश्व के सर्जक और पालक भगवान का पद आदमी को देदेना गधापन ही नहीं है, गधे का अपमान करना भी है। लोगों का क्या, उन्हें जहां जरा भी भोग विलास आदि की सुविधा हुई कि उस सुविधा देने दिलाने वाले को वे भगवान कह देते हैं । ऐसे मूर्खों की बात ध्यान देने योग्य भी नहीं है।

मायादास– जाने दीजिये गुरुदेव, न सही भगवान, गुरुदेव ही सही, आचार्य ही सही। पर आपने कमाल तो कर ही दिया। व्यभिचार की स्वतंत्रता ही नहीं, उद्दंडता को भी योग समाधि मोक्ष परम धर्म आदि साबित कर दिया। आपका प्रभावक पांडित्य असाधारण ही नहीं, अभूतपूर्व भी है। ऐसा पांडित्य आज तक किसी में नहीं देखा गया।

मैं– असाधारण तो है पर अभूतपूर्व नहीं, और प्रभावकता का कारण पांडित्य की जितनी विशेषता है उससे भी अधिक लोगों की वासना है।

मायादास– ये दोनों बातें समझ में नहीं आईं गुरुदेव ! अभूतपूर्व क्यों नहीं है और प्रभावकता में लोगों की वासना का क्या उपयोग है ?

मैं– अभूतपूर्व तो यों नहीं है कि पूर्व में और पश्चिम में इस तरह के प्रयोग अनेक तरह से होते रहे हैं। पश्चिम में तो फ्राइड आदि ने सम्भोगाद्वैत का सिद्धान्त ही पेश

कर दिया है। वे बच्चे से मां के प्यार में भी कामुकता देखते हैं। सब जगह उन्हें सम्भोग के ही रूप दिखाई देते हैं। मंच पर ऐसी नर्तकी आजाय जिसके कपड़े नाममात्रके हों और उनमें से उसके सब अंग दिखाई देरहे हों तो हजारों आदमी चौगुने दाम देखकर भी नृत्य देखने आजायंगे। नंगे रहने के तथा अनेक तरह के विलास के क्लब वहां हजारों हैं। वहीं की बातें यहां दुहराई गईं हैं इसलिये अभूतपूर्व नहीं है। इस देश में भी ये प्रयोग धर्म और साधना के नाम पर होते रहे हैं। शाक्त सम्प्रदाय और तंत्रमार्ग में सम्भोग ही समाधि और साधना के अंग बने हैं। यहां तक कि मुर्दे से भी सम्भोग की साधना यहां होती रही है। कूड़ापंथ भी इस देश में रहा है। एक कुंड में सब स्त्रियों की चोलियां डाल दी जाती थीं। फिर सब लोग बिना चुने एक एक चोली उठा लेते, जिसके हाथ में जिसकी चोली आगई वही उस रात सम्भोग संगिनी बनगई। इस तरह के प्रयोग, समाधि आदि के नाम पर इस देश में युगों तक चलते रहे हैं। इसलिये मेरी बातों में अभूतपूर्व कुछ नहीं है बल्कि यों कहना चाहिये कि उन लोगों की जूठन बटोरकर मैंने परोस दी है।

मायादास– पर आपने जूठन को स्वादिष्ट खूब बनाया, और सजाया भी अच्छी तरह।

मैं– कुत्ते तो जूठन चाटने के लिये आयंगे ही, और जूठन चाटने में उन्हें स्वाद भी दिखाई देगा और सजावट भी। इसमें मुख्य कारण कुत्ते की आतुरता है। सम्भोग को समाधि मैंने कहा और वह लोगों को पसन्द आया इसका

मुख्य कारण मेरा पांडित्य नहीं है किन्तु मनुष्य में उग्र और अनियन्त्रित कामातुरता या वासना है। ऋषि महर्षि पैगम्वरों ने सैकडों वर्षों के अनुभव के वाद यह तय किया कि मनुष्य को यदि स्वस्थ रखना हो, सन्तान का अगर ठीक निर्माण करना हो, नारी के साथ न्याय करने के लिये यदि उसे सुरक्षा देना हो, सुख शान्ति के लियें घर नाम से यदि आश्रय स्थल का निर्माण करना हो तो विवाह की प्रथा और उसकी पवित्रता परम आवश्यक है । विवाह न हो तो मनुष्य अनियन्त्रित और दीर्घकालीन सम्भोग से निर्वल ही न होजायगा किन्तु गरमी आदि नाना वीमारियों का घर वन जायगा। यौन बीमारियां अधिक से अधिक पैदा तो होंगी ही किन्तु एक दूसरे के सम्पर्क से विस्तार भी पायंगी। कपड़े सम्भोग के कार्य में थोड़ी आड़ या वाधा वने हुए हैं पर नग्नता में यह आड़ या वाधा समाप्त होजायगी । हजारों वर्ष के अनुभव के वाद मनुष्य ने जो पशु जीवन से भिन्नता पैदा की है वह समाप्त होजायगी। पशुओं में मादा अपनी सन्तान का पालन कर लेती है क्योंकि पशुओं में सन्तान निर्माण का काम है कितना सा। पशु का वच्चा मनुष्य के वच्चे से सौगुणा समर्थ होता है। मनुष्य का वच्चा एक वर्ष में चलना फिरना भी नहीं सीखपाता जव कि पशु का वच्चा कुछ घंटों या मिनिटों में चलने फिरने लगता है। मादा ने उसे कुछ दिन दूध पिला दिया कि होगया निर्माण। परन्तु मनुष्य में वच्चे के निर्माण के लिये उसे सुशिक्षित सुसंस्कारी वनाने के लिये १८-२० वर्ष तक साधना करना पड़ती है । यह काम अकेली

मादा नहीं कर सकती। मनुष्य के पास गृह वस्त्र कलासाधन विद्या-साधन आदि के असीम कार्य पड़े हुए हैं। अकेली मादा यह सब काम नहीं कर सकती। विवाह न होगा तो सन्तान तो होगी पर वह पशु से बहुत अधिक या आज की तरह विकसित न होगी। सारा बोझ नारी पर आजायगा जिससे वह किसी तरह सन्तान को जिन्दा तो रख सकेगी पर मनुष्य को विकसित अवस्था तक न पहुंच पायगी। जिस दिन से समाज में विवाह प्रथा समाप्त होजायगी उस दिन से नारी तबाह होजायगी। बलात्कार से बचने में उसकी आधी शक्ति समाप्त होजायगी, सन्तान अनाथ होजायगी। विकास तो रुक ही जायगा। सुख शान्ति सुरक्षा का स्थल घर तो बन ही न पायगा। जिस कामुक स्वतन्त्रता के गीत प्रेम प्रेम प्रेम कहकर गाये जाते हैं उसमें प्रेम का पता न रहेगा। प्रेम तो बलिदान चाहता है, संयम चाहता है। सम्भोगसमाधि में प्रेम का क्या काम? उसमें मनुष्य निरा कामुक, नारी के प्रति बेजिम्मेदार विश्वासघाती होता है। यह सब मनुष्यता की बर्बादी है।

मायादास ठंडा पड़ गया। फिर आह भरते हुए बोला कि यदि ऐसी बात है तो लोग ब्रह्मविहार के नाम से व्यभिचार का तांडव क्यों करते हैं?

मैं- इसलिये कि मनुष्य के भीतर अभी भी पशु बैठा है। धर्मशास्त्रों ने और कानून ने भी उसपर कुछ अंकुश लगा रक्खे हैं। फिर भी उसकी कोशिश तो है कि किसी तरह ये अंकुश कम होजाएं। मनुष्य के भीतर बैठा हुआ पशु अपनी

पशुता का तांडव कर सके। पशु शिव नहीं समझता सिर्फ सुन्दर समझता है। वह स्वाद जानता है, उसका परिणाम नहीं। वह सम्भोग जानता है परन्तु उसका परिणाम नहीं। तो मनुष्य के भीतर वैठा हुआ पशु जव कहीं उछल कूद का मौका पाता है तो वह उछल कूद मचाता है। ऐसी अवस्था में कोई आचार्य विद्वान कुयुक्तियों से जव मनुष्य के भीतर के विवेक को घायल कर देता है जिसने उस पशु को रोक रक्खा था तो पशु उद्दंड होजाता है। ऐसे लोग ब्रह्मविहार सम्भोग समाधि आदि के कार्यक्रमों पर टूट पड़ते हैं। जब उनपर समाधि मोक्ष-योग आदि की छाप लगादी जाती है तव तो संयम और विवेक विलकुल मृतप्राय होजाते हैं, पशुता विल-कुल निर्लज्ज होजाती है। तब मनुष्य भान भूलकर अधिक से अधिक समय, अधिक से अधिक धन, अधिक से अधिक भक्ति उनपर लुटाने लगता है जो उसकी पशुता जगाते हैं। शिवके विरुद्ध सुन्दर का स्वाद चखाते है। ऐसे ठग को वे भगवान तक कहने लगते हैं।

मायादास– गुरुदेव तव आप ऐसा क्यों करते हैं ?

मैं– क्योंकि मुझे भगवान कहलाना है। असीम वैभव का भोग करना है, असीम पूजा प्रतिष्ठा लूटना है। यह सब तभी सम्भव है जब मैं मनुष्य की वासनाओं को खुराक पहुं-चाऊंगा। उसकी उद्दाम वासनाओं को जगाकर उन्हें तृप्त करूंगा। मैंने ईमानदार वनकर, जनहितैषी वनकर बहुत देख-लिया। उस समय लोगों ने प्रतिष्ठा तो क्या, गुजर वसर के लिये देने में भी कंजूसी की। तब मुझे भ्रष्ट होना पड़ा।

में समाज से इसका बदला लेरहा हूं । उसे लूट रहा हूं, ठग रहा हूं और इसीसे पुज रहा हूं । सत्यभक्तों को न पहिचानने वाले इस समाज से मैं घृणा करता हूं । इतना ही नहीं, उसकी कृतघ्नता के कारण मैं उसे दंडित भी करना चाहता हूं । सो वही कर रहा हूं । ये सब ठाठबाट इसी योजना के परिणाम हैं ।

मायादास काफी समय तक स्तब्ध रहा । फिर बोला— गुरुदेव, जब आप इस सारी योजना की अन्याय्यता से परिचित हैं तब तो कभी न कभी इसे छोड़ ही देंगे । तब आज ही क्यों न छोड़ देना चाहिये ।

मैं— आज तो छोड़ने का सवाल ही नहीं है किन्तु आगे भी नहीं छोड़ना है । इससे हम समाज को कोई लाभ नहीं पहुंचा सकेंगे, सिर्फ अपनी ही हानि कर सकेंगे । गधे के ऊपर दया करके तुम उसे लादना बन्द करदो तो इससे तुम घाटे में रहोगे, गधे को कोई फायदा नहीं पहुंचासकोगे । क्योंकि उसे तो कोई न कोई लादेगा ही, भले ही तुम न सही दूसरा सही । जब गधे को लादना ही है तो हम ही क्यों न लादें । जब समाज को लुटना ही है तब हम ही क्यों न लूटें । इसलिये इस विषय में तो कुछ सोचो ही नहीं मायादास ! जिस राह में कदम बढ़ाया है उसी में बढ़ाते चलो । अभी हमें और भी बहुत से काम करना पड़ेंगे । इस बात का भी ध्यान रक्खो कि रुक्मिणी और किशोरी को भी यह न मालूम हो । क्योंकि नारियां भावुक होती हैं । उन्हें अगर पाप की पापता न पता लग जाय तो वे अपना स्वार्थ भी भूल जाती हैं ।

इसलिये यह बात हमारे तुम्हारे भीतर ही सीमित रहना चाहिये ।

मायादास– ऐसा ही होगा गुरुदेव ! ये बातें कभी किसीसे नहीं कहीं जायंगी ।

मैं– सो तो ऐसा ही होना चाहिये । पर कहना सिर्फ शब्दों से नहीं होता, स्वर से भी होता है, चेष्टा से भी होता है, मुखाकृति से भी होता है और कृति से भी होता है । इसलिये इन पर भी अंकुश रखना पड़ेगा । तुम्हारे स्वर से, चेष्टाओं से, चेहरे से यह पता न लगना चाहिये कि तुम्हें इन कामों में उत्साह नहीं है । न काम में ढीलापन प्रगट होना चाहिये । जिस राह में कदम बढ़ाया है उसमें दृढ़ता से डटे रहो । न्याय अन्याय पाप पुण्य का कोई विचार न करो । बस, सफलता का विचार करो । और सफलता की मात्रा बढ़ाते चलो । अब पीछे नहीं हटा जासकता । दो ही बातें हैं । या तो आगे बढ़ो या मरो ! यदि मरना नहीं है तो आगे बढ़ो । समाज की चिन्ता न करो, वह इसी लायक है ।

मायादास– बहुत अच्छा गुरुदेव !

१८– कीर्तन और साधुवेष

आज मायादास आया । प्रणाम किया और चुपचाप बैठ-गया । मैंने पूछा किस बात की विषण्णता है मायादास !

मायादास ने कहा– विषण्णता तो कुछ नहीं है गुरुदेव, फिर भी ऐसा मालूम होता है कि ब्रह्मविहार की बात पर कुछ पर्दा और पड़ना चाहिये । साथ ही ब्रह्मविहारी और ब्रह्मविहारिणियों के जीवन में कुछ और कार्यक्रम इसप्रकार

के बनना चाहिये जिससे वे धर्म में व्यस्त मालूम हों तथा उनका कुछ बाहरी रूप भी ऐसा हो जिससे पवित्रता का आभास होता रहे।

मैंने कहा– आधी रात के बाद में भी यही सोचता रहा हूं। और मैंने कुछ बातें तय की हैं। तुम्हारा मन भी उसी दिशा में काम करता है जिस दिशा में मेरा मन करता है।

मायादास– आखिर मैं आपकी छाया ही तो हूं गुरुदेव!

मैं– नहीं, तुम छाया नहीं हो तुम मेरे ही एक संस्करण हो।

मायादास– पर लघु संस्करण।

मैं– लघु ही सही, पर हो संस्करण। छाया नहीं।

मायादास– यह सब आपकी कृपा है गुरुदेव। हां! तो अब बताने की कृपा कीजिये कि आपने और क्या बातें तय की हैं।

मैं– पहिली बात तो कीर्तन की है। ब्रह्मविहारी और ब्रह्मविहारिणियों तथा और भी कुछ लोगों को प्रतिदिन कीर्तन करना चाहिये। हरे राम, हरे कृष्ण, राम राम हरे हरे, राधे-श्याम, सीताराम आदि जो भी नाम कीर्तन करना हो करें। संस्थान के भीतर भी करें और बाहर भी। भीतर की अपेक्षा बाहर अधिक करें। सब मिलकर सड़क पर नाचते कूदते हुए कीर्तन करें। और ऐसे भावावेश का प्रदर्शन करें कि कीर्तन की तन्मयता में सड़क पर गिर भी पड़ें। क्षणभर को बेहोश सा होने का डौल भी करें। इससे भक्ति असली मालूम होगी और जनता पर इसका अच्छा असर पड़ेगा। इस कीर्तन मे

ब्रह्मविहार करनेवाले और न करनेवाले दोनों वर्ग रहें।

मायादास– यह बहुत अच्छा प्रयोग है गुरुदेव। इस देश में नामकीर्तन से सारे पाप कट जाते हैं। इसलिये ब्रह्म-विहार में जो भी पाप होगा वह कटजायगा। और जो लोग नामकीर्तन करते हैं उन्हें लोग धर्मात्मा समझते हैं इसलिये उनके पापों पर लोग उंगली न उठायेंगे।

मैं– इसके सिवाय और भी पर्दा डालना है। इन सब लोगों को साधु बनाना है।

मायादास– साधु! ये सब लोग साधु कैसे बनेंगे? सब लोग अपने धंधे से लगे हैं, कमाते खाते हैं, कोई कोई बड़े बड़े श्रीमन्त हैं। धन कमाने में उन्हें नाना तरह की बेईमानी करना पड़ती है तब ये लोग साधु कैसे बनेंगें?

मैं – साधु बनेंगे नाम से और वेष से। इन्हें न अपना धंधा छोड़ना है न ईमानदार संयमी बनना है, न जीवन में कुछ सुधार करना है। सिर्फ साधु का वेष लेना है। और अपना नाम बदलना है।

मायादास– कैसा वेप और कैसा नाम।

मैं– इस देश में जैसा साधु वेष होता है वैसा वेष। साधारणतः भगवा रंग की धोती उसी रंग के अन्य कपड़े और उसी रंग की साड़ियां पोलके आदि। साथ ही गले में एक जपमाला। उसमें मेरे चित्रवाला लाकेट। इसके सिवाय नाम भी नये देना होगा। जैसे साधु चिन्मय, साधु प्रेमानन्द, साधु शंकरानन्द, साध्वी चिन्मयी साध्वी आनन्दमूर्ति आदि। नाम का और वेप का इतना प्रभाव पड़ेगा कि साधारणतः

कोई उंगली न उठा सकेगा । फिर भजन कीर्तन है ही । इससे दिनचर्या के लिये काफी काम मिलजायगा । साधु वेष देकर और नाम बदलकर हम लोगों को मुफ्त में ऊंचा प्रमाणपत्र देते हैं । जैसे परीक्षा न लेकर प्रमाणपत्र देने की दूकानें खुली हुई हैं और हजारों लोग उन झूठे प्रमाणपत्रों के लिये पैसे देते हैं उसी प्रकार साधुता के इस झूठे प्रमाणपत्र के लिये भी हजारों लोग आयेंगे । वे दुनिया को ठगेंगे, हम उन्हें ठगेंगे। इतनी योजना करने के बाद फिर जैसा चाहे चैन करो ! रात्रि में ब्रह्मविहार करो, कुछ पाप न होगा और जो होगा वह वेष और कीर्तन से ढकजायगा ।

मायादास– ढक ही न जायगा गुरुदेव, कट भी जायगा । आखिर परमात्मा को सब से ज्यादा भूख अपनी भक्ति कराने की है । सो जिसने उसकी भक्ति कर दी उसके सब पाप वह माफ करेगा ही ।

मैं– माफ तो क्या करेगा पर माफ करना कहलायगा जरूर ।

मायादास– क्या वह पाप माफ न करेगा ?

मैं– कैसे करेगा ? और किस किस के करेगा ? पाप कहते ही उसे हैं जिससे दूसरों का, दुनिया का दुःख बढ़े । अब यदि मैंने किसी का दुःख बढ़ाया, उसके बेटे की हत्या करदी या उसकी पत्नीपर बलात्कार किया और परमात्मा का नाम जपते ही परमात्मा ने मुझे माफ कर दिया तो दूसरे भी तो यही पाप करेंगे । वे मेरा बेटा मार डालेंगे, मेरी पत्नीपर बलात्कार करेंगे और नाम कीर्तन आदि से परमात्मा उनके

भी पाप माफ करेगा। इसप्रकार पाप माफ भी होता जायगा और पाप से सब के घर भी बर्बाद होते रहेंगे, यहीं नरक बनता जायगा। परमात्मा इतना मूर्ख और रिश्वतखोर भी नहीं है कि वह पापियों के पाप माफ करके पाप बढ़ाता रहे। पर छोड़ो इस बात को, हमें इससे कोई मतलब नहीं कि परमात्मा क्या करेगा ? हमें तो इससे मतलब है कि हमारे ग्राहकों के पापों पर पर्दा पड़ा रहेगा। ध्यान, नाम-कीर्तन, साधुवेष, साधुनाम आदि इतने पर्दे हैं कि इनके भीतर कोई कोशिश करके भी नजर नहीं डाल सकता। इससे दुनिया का क्या होगा इससे हमें कोई मतलब नहीं। हमारा कारबार बढ़ रहा है, वैभव और प्रतिष्ठा बढ़ रही है, आनन्द विलास बढ़ रहा है हमारी पूजा बढ़ रही है, हम भगवान बन रहे हैं। बस ! और क्या चाहिये।

मायादास- सचमुच हम कृतकृत्य हैं गुरुदेव, यह सब आपकी कृपा है।

१९- ठगी की दूकानें

मायादास ने आज आकर कहा- अपने संस्थान में आदमी बहुत होगये हैं और स्थान पाने के लिये आते भी रहते हैं। पर अब बहुत गुंजाइश नहीं है। आगन्तुकों को क्या काम बताया जाय यह एक समस्या ही है।

मैंने कहा- आने दो, कोई नुकसान नहीं है। यहां एक स्कूल खोल दो जहां एक दो माह में ठगी का पाठ्यक्रम पूरा कराया जाय और उसे पूरा करके वे लोग गांव गांव में बिखर जायं और ठगी की दूकान खड़ी करलें। एक एक दूकान में

पांच पांच सात सात आदमियों की गुजर होने लगेगी। ऐसी दर्जनों दूकानें देश में खोली जासकेंगी।

मायादास– अगर ऐसा होसके तो बहुत अच्छा है। फिर तो अपना संस्थान ठगी का विश्व विद्यालय बन जायगा जिसके विद्यालय जगह जगह कायम होजायंगे।

मैंने कहा– जरूर होजायगे। इसके बाद मैंने मायादास को सब योजना समझादी और उसके अनुसार काम भी शुरु कर दिया। ठगी की पढ़ाई चालू होगई। गुप्त कक्षाएं चलने लगीं। जो निष्णात होते गये उन्हें काम पर भेजा जाने लगा।

पहिले दिन पांच आदमियों का दल आया। उनमें से मैंने एक आदमी को चुना। और जंगल में एक कुए का पता बताकर कहा कि तुम उस कुए के पास एक झोपड़ी बना–कर रहने लगो। साधु का वेष लेलो। तुम्हारा नाम कुछ भी रहे। कुछ दिन बाद तुम्हारा वह नाम लुप्त होजायगा। और तुम अमृतबाबा के नाम से प्रसिद्ध होजाओगे। यह तुम्हारे साथियों को करना है।

२०– अमृतकुंड

जब तुम झोपड़ी में रहने लगोगे तब तुममें से दो आदमी पास के गांव में साधारण गृहस्थ के वेष में जायंगे। और गांव–वालों से अमृत बाबा का अमृत कुंड पूछेंगे। जब गांववाले अजानकारी बतायेंगे। तब तुम दोनों को गांववालों से कहना है :– अरे! तुम अमृत बाबा का अमृत कुंड नहीं जानते तुम्हारे गांव के पास में एक सिद्ध पुरुष रहते हैं और उनका

कृपा से वहां का कुआ अमृतकुंड बनगया है जिसका जल पीने से अनेक रोगियों के रोग दूर होगये हैं । अनेकों के भाग्य खुल-गये हैं । और तुम लोग नहीं जानते !

गांववाले कहेंगे कि यहां से १॥ मील दूर जंगल में एक कुआ जरूर है पर वहां कोई सिद्ध पुरुष रहते हैं और वह कुआ अमृत कुंड बन गया है इसका तो हमें पता ही नहीं है ।

तुम कहना- तुम लोग अपने दुर्भाग्य को लिये पड़े रहो पर हमें उस कुए का रास्ता बतादो ।

गांववाले रास्ता ही न बता देंगे पर दो चार आदमी साथ होजायेंगे ।

जब तुम लोग कुए के पास पहुंच जाओगे तब जोर जोर से अमृत बाबा का जय जयकार करने लगना । जिसे सुनकर अमृत बाबा बननेवाले को समाधिस्थ होजाना है । और तुम लोगों को समाधिस्थ बाबा की वन्दना कर कुए का पानी पीना है । पानी पीते ही तुम दो में से एक जो बीमार बनेगा उसे अपनी बीमारी के घटने की घोषणा करना है । और बाबा के चरणों में दस रुपये चढ़ाकर चले जाना है ।

इसके बाद बाकी दो में से एक आदमी सफेदा के जगह जगह दाग लगाकर कोढ़ी बनजायगा और गांववालों को दिखाते हुए अमृत कुंड जायगा । कुछ दिन दोनों वहां रहेंगे । और कोढ़ी का कोढ़ दूर होजायगा । इसके बाद ठगी की दूकान जम जायगी । वहां के समाचार देते रहना और सलाह लेते रहना ।

उन पांचों ने बहुत अच्छी तरह से काम किया । बीच

बीच में यहां से किसी किसी ब्रह्मविहारिणी को भी बीमार बनाकर भेजता रहा हूं। और उसे नीरोग घोषित करवाता रहा हूं।

इसकेबाद तो वहां हर दिन मेंला लगने लगा है। सैकडों आदमी आने लगे हैं। उनके ठहरने के लिये धर्मशाला बनगई है। वहां तक सड़क भी बनगई हैं। तांगेवालों का धंधा पनप गया है। दूकानें भी लगगई हैं। ये दूकानदार और तांगेवाले अमृत कुंड के प्रचंड प्रचारक बनगये हैं। वे उसके जलके प्रभाव की सैकडों कहानियां खुद बनाकर सुनाने लगगये हैं। क्योंकि यहां का मेला जितना बढ़ेगा उनकी दूकानें और तांगेवालों का धंधा उतना ही अधिक चलेगा।

यहां आकर कुछ न कुछ रोगी अच्छे होते ही हैं। कुछ तो इसलिये अच्छे होजाते हैं कि घरके बाहर खुली हवा में आनेसे उनके स्वास्थ्य पर अच्छा प्रभाव पड़ता है। मन में स्वस्थ होने की श्रद्धा लेकर जो आते हैं उनकी श्रद्धा का प्रभाव भी उनके स्वास्थ्य पर पड़ता है। श्रद्धालु लोगों के वातावरण का भी प्रभाव पडता है। अगर कुछ अच्छे नहीं भी होते हैं तो भी मनोवैज्ञानिक प्रभाव से उन्हें कुछ न कुछ अच्छे होने का भान होने लगता है। फिर भी बहुत से रह- जाते हैं जिन्हें कुछ भी लाभ नहीं होता वे अश्रद्धालु, घोर पापी, अभागे समझ लिये जाते हैं। इसप्रकार का फतवा देने- वाले मेरे ही आदमी होते हैं जो जनता में मिले रहते हैं। श्रद्धावश अन्य लोग भी ऐसा फतवा देने लगते हैं। इस डर से कोई कोई लोग बीमारी दूर न होने पर भी अपने को

नीरोग बताने लगते हैं। इस प्रकार ठगी की यह दूकान भी अच्छी चल जाती है। मेरे आदमियों की गुजर होने के साथ दुकानदारों, तांगेवालों तथा गांववालों का भी अच्छा लाभ होता है। दुनिया लुटती है तो लुटे, उसे उसकी मूढ़ता का दंड मिलना ही चाहिये। पर इतने आदमियों को जो आमदनी होजाती है वह क्या कम पुण्य है।

मानाकि इससे देश का उत्पादन नहीं बढ़ता; धन का, शक्ति का, समय का अपव्यय ही होता है सो हुआ करे, मेरा तो लाभ ही लाभ है। मेरी प्रतिष्ठा मेरा वैभव तो बढ़ता ही जाता है।

२१- दिव्य बूटी

एक जगह एक लड़के को लेकर कुछ लोग भेजे गये, लड़का चमत्कारी है यह प्रचार कराया गया। उसके हाथ की बूटी से सब रोग अच्छे होते हैं इसकी शुहरत चारों तरफ़ कराई गई। पहिले उसकी बूटी से अच्छा होने का ढोंग करने वाले अपने ही आदमी थे। फिर जनता उमड़ पड़ी। हर दिन हजारों बीमार आदमी बाबा की बूटी लेने के लिये आने लगे। सब कतार से खड़े होजाते थे। और बाबा आकर सब को बूटी बांट जाते थे। बूटी क्या थी किसी जंगली झाड़ की टहनियों के टुकड़े होते थे। यह धंधा खूब चला। जैसा कि अमृत कुंड में हुआ था यहां भी हुआ। तांगे वाले, दूकानवाले, गांववाले सभी प्रचारक बनगये। पर यहां भीड़ बहुत इकट्ठी होने लगी। पैसा भी खूब आया। पर भीड़

को सम्हालने की व्यवस्था नहीं होसकी। पानी की भी कमी पड़गई। इसलिये हैजा फैलगया। सैकड़ों आदमी मर गये। और हैजे के बीमार तो बूटी से अच्छे हो नहीं सकते थे। और जब सामने पटापट मौते होने लगीं तब बूटी की पोल खुलगई। और दूकान उजड़ गई। पर उजड़ जाने के पहिले मेरे चेलों ने खूब कमा लिया है कि वर्षों चैन से रहसकेंगे। पैसे की, समय की, श्रम की भयंकर बर्बादी हुई इसकी मुझे चिन्ता नहीं है। जब समाज मूढ़ है, हरामखोर है तब उसकी बर्बादी होना ही चाहिये। यह हरामखोरी नहीं है तो क्या है कि लोग बीमारी में न तो संयम रखना चाहते हैं, न कोई इलाज कराना चाहते हैं, किसी बाबा के प्रसाद से अच्छा होना चाहते हैं। यह मूढ़ता आम जनता में ही नहीं है पर बड़े बड़े अफ़सर और सरकारी मंत्रियों तक में है। सरकारी पदों पर पहुंचने से कोई विवेकी या समझदार होजाता है ऐसी कोई बात नहीं है। चमत्कारों के अन्धविश्वास इस देश के सभी श्रेणियों के व्यक्तियों में पाये जाते हैं। उन अन्धविश्वासों के कारण उन्हें ठगा न जाय तो क्या किया जाय। जब लोग अपनी इच्छा से पशु बनने को तैयार हैं तब हम सरीखे लोग उन्हें लादें क्यों नहीं? उन्हें जोतें क्यों नहीं?

हां! यह जरूर है कि सैकड़ों आदमी मर गये। सो मरजाने दो। ऐसे हैवानों के जीने का भी क्या अर्थ? देश की जनसंख्या बढ़ रही है ऐसी हालत में यदि मेरी योजना से हजार दो हजार आदमी मर जाते हैं तो यह भी देश का भला है। उनके कुटुम्बी तड़पते होंगे सो तड़पा करें कुछ

अनाथ हुए होंगे सो हुआ करें वे अपनी मूढ़ता दंड भोगते हैं इसमें मेरा क्या कुसूर । समाज ने एक दिन मेरी सत्यभक्ति को नाना तरह से दंडित किया था उस पाप के प्रभाव से वह दंडित हो रहा है तो यह उचित ही तो है

२२– हथकड़ी बाबा

एक दिन एक प्रौढ़ व्यक्ति आया । बोला– गुरुदेव, हमें भी कुछ रास्ता बताइये जिससे मैं पूजा प्रतिष्ठा लूट सकूं । इसके लिये मैं शारीरिक कष्ट सहसकता हूं पर मैं ज्ञानी और विद्वान नहीं हूं । माभूली समझदारी है । इसलिये मैं ज्ञान ध्यान की बातें तो न कह सकूंगा पर मेरी ऊटपटांग बातों से भी काम चल जाय ऐसा रास्ता बताइये ।

मैंने कहा– इस देश की मूढ़ जनता में पूजा प्रतिष्ठा लूटने के लिये ज्ञान की जरूरत नहीं है, कुछ भी ऊटपटांग काम दृढ़विश्वास से किये जायं तो इस देश की जनता खुशी से ठगी जाने के लिये तैयार होजाती है । अगर तुम कष्ट उठाने को तैयार हो तो सफलता सरलता से मिलसकती है ।

वह– तो इसकेलिये मैं क्या करूं गुरुदेव ?

तुम किसी गांव के किनारे किसी झोपड़ी में अपने हाथ पैरों में जेल के कैदियों की तरह बेड़ियां पहिनकर लेट जाओ और पड़े रहो । आसपास में टट्टी पेशाव खिसक खिसक कर कर लिया करो ।

वह– पर मैं बेड़ियां पहिनकर वहां पहुंचू कैसे ? और शुरु में मेरी व्यवस्था कौन करेगा ? कहीं मैं भूखा प्यासा पड़ा पड़ा मरगया तो ?

मैं हंसा– मैंने कहा ऐसा न होगा। मेरे चेले यह सब काम कर दंगे। वे भक्त यात्री बनकर तुम्हारी सब तरह की सेवा करेंगे। भक्ति से तुम्हें भोजन करायेंगे, तुम्हारा मल–मूत्र उठायगे। तुम जो कुछ ऊटपटांग बोल दोगे उसका ऐसा अर्थ लगायेंगे कि लोगों को तुम चमत्कारी मालूम होने लगोगे। धन की इच्छा से, सन्तान की इच्छा से, चुनाव में या मुकद्दमें मे जीत की इच्छा से लोग तुम्हारे शरण में आने लगगे।

वह– अगर कोई पूछे कि आपने ये हथकड़ियां क्यों पहिन रक्खी हैं, तो मैं क्या जबाब दूंगा।

मैं– जबाब बहुत अच्छा है। कहना– मैंने परमात्मा से आग्रह किया है कि संसार के प्राणियों पर दया करके बन्धन से मुक्त करदे। उनके बन्धन मैं अपने ऊपर लेरहा हूं। जब तक तू उन्हें बन्धन से मुक्त नहीं करता तब तक मैं अपने को इन बेड़ियों में जकड़े रहूंगा।

तुम्हारे इस उत्तर से लोगों पर तुम्हारी विश्वहितैषिता की छाप लग जायगी। सब धन्य धन्य कहने लगेंगे, गली गली में तुम्हारे परोपकार के गीत गाये जाने लगेंगे।

वह– क्या परमात्मा इससे संसार के प्राणियों को बन्धन से मुक्त कर देगा ?

मैं– परमात्मा इतना भोला या मूर्ख नहीं है कि वह हमारे तुम्हारे चकमें में आजाय। परमात्मा ने किसी को बन्धन में नहीं डाला है। अपने अज्ञान असंयम दुस्वार्थ–परता से मनुष्य बन्धनों में पड़ा है। यह दूर करदे तो वह बन्धनों

से, दुःखों से छूट सकता है।

वह– तो फिर मेरी वेड़ियों की वात पर कौन विश्वास करेगा ?

मैं– सव विश्वास करेंगे। इस देश के लोगों को अन्ध-विश्वास की बीमारी है। तुम कैसी भी ऊटपटांग बात घोषित करदो लोग उसपर विश्वास करेंगे। और तुम्हारी पूजा से अपने स्वार्थ की सिद्धि की आशा बांधने लगेंगे। लोग जब इतने हरामखोर हैं कि विना किसी उपयुक्त श्रम के लाभ की आशा लगाने लगते हैं तव वे किसी भी धूर्त के शिकार होजाते हैं। ऐसी अवस्था में किसी भी धूर्त को अपनी दूकान खड़ी कर लेना क्या वड़ी वात है ! जो लोग धन के लिये विना कष्ट का प्रदर्शन किये ठगी की दूकान खड़ी कर लेते हैं वे भी सफल होजाते हैं फिर तुम्हें तो धन की लालसा नहीं है और कष्ट-प्रदर्शन असाधारण है, सिर्फ प्रतिष्ठा की ही लालसा है। ऐसी हालत में तुम्हारी दूकान खड़ी होने में कोई शंका नहीं है। थोड़े ही दिनों में तुम्हारे पास हर दिन मेला लगने लगेगा।

वह– अगर किसी की लालसा पूरी न हुई तो ?

मं– तुम इसकी चिन्ता न करो। लोग इतने गधे हैं कि वे हजार वार ठगे जाने पर भी कुछ न समझेंगे। इधर मेरे आदमी तुम्हारे चमत्कारों की कहानियां गढ़ गढ़ कर सुनायेंगे। उसका असर जनता पर भरपूर पड़ेगा। फिर मेले से जिनके स्वार्थ सिद्ध होंगे वे भी अच्छे प्रचारक वनेंगे।

वह– वहुत अच्छा गुरुदेव ! जाता हूं। आपके आशीर्वाद

से जरूर मैं देवता की तरह पुज सकूंगा। मुझ सरीखे गमार को आपने देवता बनने की राह बतादी यह आपकी बड़ी कृपा है।

२३- नंगा बाबा

ठगी की दूकान चलानेवाले उम्मीदवारों में एक तरुण भी था। पढ़ा लिखा नहीं था, कुछ सनकी सा मालूम होता था। मैंने पूछा- तुम दुनिया को किस तरह ठग सकते हो ?

वह बोला- मैं क्या समझूं ? मुझे तो लोग पागल कहते हैं।

मैं- तुम्हें लोग पागल क्यों कहते हैं ?

वह- मैं क्या समझूं ?

मैं- 'मैं क्या समझूं' क्या तुम्हारा तकिया कलाम है ?

वह- मैं क्या समझूं ?

मै समझ गया कि वह आधा पागल है। ऐसे लोग भी इस मूढ़ समाज में काफी प्रतिष्ठा लूट सकते हैं। इसकेलिये मुझे कुछ योजना करना पड़ेगी। मैंने उससे पूछा- क्या तुम नंगे होकर लोगों में घूम सकते हो ?

वह- क्यों नहीं, इससे कपड़ों का बोझ ही हटेगा और उसकी चिन्ता भी न रहेगी।

मैं- पर एक बात का ध्यान रखना कि किसी भी स्त्री की तरफ बुरी नजर मत डालना और सब स्त्रियों को मां कहना। भले ही वह छोटी हो या बड़ी।

वह- जरूर कहूंगा। स्त्रियां जब मुझे खिलायंगी पिला-यंगी तब वे मां होंगी ही।

मैं— पर कोई न भी खिलाये पिलाये तव भी उसे मां कहना ।

वह— जरूर कहूंगा आखिर स्त्रियां तो सव एक हैं ।

मैं— वस, तो तुम्हें इतना ही करना है। नंगे घूमना है, सव को मां कहना है । वाकी काम मेरे आदमी करेंगे ।

फिर मैंने अपने आदमियों से कहा— इसे शहर में नंगा घूमने दो। जव यह भीड़ के भीतर हो तव तुम दर्शक वन– कर इसके पैर पकड़कर आशीर्वाद मांगना । इसके उत्तर में यह जो कुछ भी वोले उसका मतलव जनता को समझाकर उसका प्रभाव वढ़ाना है। कुछ व्रह्मविहारिणियां भी भीड़ में इसकी वन्दना करेंगी और आशीर्वाद मांगेंगीं। तुम लोगों के ऐसा करने से और लोग भी इसकी वन्दना करेंगे । वस, यह गलीगली में पुजने लगजायगा । फिर इसकी झोपड़ी वनवा देना जहां यह पड़ा रहा करेगा। जव यह डेरे पर पहुंच जाय तो अपने में से कोई कोई फल मिठाई आदि चढ़ायगा । दूसरे भी चढ़ायेंगे । कुछ यह खुद खायगा वाकी दूसरों को वांट देगा। कोशिश ऐसी करना जिससे वटवारे में अपने लोग ही ज्यादा रहें। इसप्रकार अपने आदमियों को ही वहुत कुछ मिला करेगा । रात में जो रह जायगा वह सव किसी न किसी वहाने तुम लोगों को वांट दिया जायगा ।

इस प्रकार योजना वनाकर उस पागल को पुजवादिया है । आज यह सुनकर मुझे हंसी आई कि एक मन्त्री भी चुनाव में विजय पाने के लिये उस पागल का आशीर्वाद लेने गये थे। संसद् के चुनाव के प्रत्याशी भी गये थे। ऐसे ऐसे लोग भी इस देश में मंत्री और विधानमंडलों के सदस्य वनजाते हैं !

२४– गाली बाबा

वैसे इस देश में जनता को बीमारियां बहुत हैं पर एक बड़ी बीमारी साधु पूजा की भी है। पर साधुपूजा में साधुता नहीं देखी जाती सिर्फ विचित्रता देखी जाती है। कैसा भी ऊटपटांग काम किया जाय पर अगर उसने कुछ दलाल जोड़ लिये हैं तो वह पुज जायगा। इसलिये जब एक प्रौढ़ने काम मांगा तब मैंने कह दिया तुम गाली बाबा बनजाओ।

वह बोला– गाली बाबा कैसा ?

मैं– बस ! तुम सब को बुरी से बुरी गालियां दिया करो। तुम्हारी पूजा होजायगी।

वह– गाली देने से तो मैं जूते खाउंगा गुरुदेव, पूजा तो क्या होगी !

मैं– तुम समझते नहीं, यह हिन्दू समाज है। यहां गाली देनेवाले भी साधु मानलिये जाते हैं और पुजजाते हैं। हां ! शुरुआत में कुछ तरकीब से काम लेना पड़ता है। जैसा कि ठगी की किसी भी दूकान में लेना पड़ता है।

वह– वह कौनसी तरकीब है गुरुदेव !

मैं– उसकी योजना तुम्हें नहीं मुझे करना है। तुम तो साधु का वेष लेलो। और जो तुम्हारे दर्शन पूजा को आयें उन्हें तुम गाली देना शुरु करदो।

वह– कैसी गालियां ?

मैं– जैसी तुम देसको। मां बहिन की गालियां भी तुम देसकते हो। हां ! जो विशिष्ट व्यक्ति आयें उन्हें कुछ

नम्हल कर देना । जो जितनी अन्धश्रद्धा बतलाये उसे उतनी ही अधिक गाली देना और भद्दी भद्दी गालियां देना । बस, कुछ समय के अनुभव से तुम खुद समझने लगोगे कि कौन कितनी गालियां सह सकता है ।

वह– पर मुझे तो डर लगता है कि पहिले ही दिन गालियां देने पर पिट जाऊंगा ।

मैं– न पिट जाओगे । पहिले दिन तो गाली खानेवाले मेरे ही आदमी होंगे । जो इस बात का प्रचार करेंगे कि महाराज ने जिसे गाली देदी उसका कल्याण होगया । महा-राज़ की गालियां ही आशीर्वाद हैं । मेरे आदमियों का व्यवहार देखकर दूसरे लोग भी गाली को आशीर्वाद मानने लगेंगे । बस, भीड़ लगने लगेगी, धन पैसा माल चढ़ने लगेगा । मेरे आदमी बीच बीच में दर्शनार्थी भक्तों के रूप में आते रहेंगे । सब व्यवस्था करते रहेंगे । यात्रियों के आने से स्थानीय लोगों का धंधा चलने लगता है इसलिये वे लोग भी तुम्हारी गालियों के चमत्कारों के गवाह बनजायंगे । इस तरह तुम्हें प्रतिष्ठा भी मिलेगी, भेंटें भी मिलेगीं । हां ! भेंट का स्वीकार भी ऊटपटांग गालियों के साथ करना ।

इसके बाद उसे सिखाया कि किस मौके पर कैसे आद-मियों को कैसी गाली देना । धीरे धीरे बीभत्स से बीभत्स गालियां भी लोग सहने लगेंगे, गालियां खाकर भेंट चढ़ाने लगेंगे । इसके बाद जब समाज में तुम्हारी खूब प्रतिष्ठा होजाय तब तुम मारपीट भी कर सकते हो । लोग तुम्हारे डंडे खाकर भी हाथ पैर जोड़ेंगे । और यह भी तुम्हारा

आशीर्वाद है ऐसा मानकर चलेंगे । जहां कहीं थोड़ी बहुत गड़बड़ी होगी उसे हमारे आदमी सम्हाल लेंगे । मेरे एक दो आदमी तुम्हारे पास किसी न किसी वेष में बने रहेंगे । पर याद रखो इस धंधे में तुम्हें जो भी आमदनी होगी उसमें तुम्हारे खाने आदि की भरपूर व्यवस्था तो होगी ही पर बाकी आमदनी सहयोगी आदमियों में बटजायगी। हां, कुछ तुम्हारे खाते भी जमा होती रहेगी जिससे जरूरत होने पर तुम्हारे भी काम आये।

वह- इतना काफी है गुरुदेव !

इसके बाद उसकी दूकान जम गई । थोड़े ही दिनों में वहां सैकड़ों आदमी आने लगे । अब वह किसी को डंडा भी मारता है तो भी लोग सहन करते हैं और उसे बाबा का आशीर्वाद समझते हैं। वह खूब प्रतिष्ठित होगया है और उसके जरिये मेरे आदमियों को अच्छी आमदनी होने लगी है।

बाहरे ! हिन्दू समाज, तुझमें पूजा प्रतिष्ठा आदि प्राप्त करने के लिये किसी को ज्ञानी संयमी सेवाभावी बनने की क्या जरूरत है । धूर्तता की ही जरूरत है । और गाली बाबा भी इसका एक प्रमाण है ।

२५- मौनी बाबा

कुछ दिन पहिले जिस अपढ़ आदमीने अपने लायक ठगी की दूकान की योजना चाही थी उसकी भी सफलता के समा- चार आरहे हैं। मैंने उससे कहा था कि तुम शिक्षित तो हो नहीं, लोगों को चकमा देने के लिये कुछ बात नहीं कर सकते फिर भी तुम इस हिन्दू समाज में पुज सकते हो । तुम्हें एक

जिसदिन बोलेंगे संसार हिल जायगा, प्रलय आजायगा। संसार में इतनी शक्ति कहां है कि उनके शब्द झेल सके।

मेरे शिष्य उसकी मामूली चेष्टाओं के बड़े गम्भीर और प्रभावक अर्थ निकालते थे। लोग अपनी मुराद पूरी कराने के लिये दर्शन के लिये आते थे। पूजा करते थे, भेंट चढ़ाते थे। मेरे शिष्य उन भेंटों से प्रसाद मंगवाकर बांट देते थे। थोड़ासा धन प्रसाद में जाता था बाकी मेरे शिष्य बांट लेते थे। कुछ यहां भी भेजते थे।

कैसा मूढ़ देश है! कोई आदमी बोलने का श्रम करते करते थक जाय, या विशेष चिन्तन मनन करने के लिये एकान्त में चुपचाप बैठजाय तो यह समझ में आता है। जहां मौन आदि विश्राम हैं या चिन्तन के लिये बहुत जरूरी हैं वहां उतने समय के लिये मौन का कुछ अर्थ है। पर मौन धर्म या तप नहीं है वह सिर्फ आवश्यकता के अनुरूप विश्राम है। और उसे विश्राम की दृष्टि से ही देखना चाहिये। उसे तपकी प्रतिष्ठा न देना चाहिये। मानलो कोई मौन लेकर कोई गम्भीर चिन्तन कर रहा है तो महत्ता चिन्तन की है, मौन की नहीं। उसने क्या चिन्तन किया उससे क्या जगत् कल्याण हुआ या होसकता है इसी पर चिन्तन का मूल्यांकन होगा। मौन के कारण कुछ नहीं।

पर यह विवेक इस देश की मूढ़ जनता में सदियों तक न आयगा इसलिये दम्भियों की पूजा होती रहेगी और यह देश कर्मण्य और समृद्ध न बनेगा। सो न बने, मैं तो समृद्ध बन ही रहा हूं। और सैकड़ों को समृद्ध बना रहा हूं। जनता

अगर पशुओं से भी अधिक मूढ़ है तो इसकेलिये मैं क्या करूं ? जनता यदि पशु बनी रहना चाहती है तो मैं उसपर सवारी करने से क्यों चूकूं ?

२६– दूधबाबा

आज दूधबाबा के समाचार भी मिले । वह भी बहुत मजे में है । मुझे इसकी थोड़ी चिन्ता थी । क्योंकि ऐसा बेकार आदमी मुफ्त में समाज से चार छह सेर दूध हर दिन लेता रहे यह थोड़ा कठिन ही था । पर उसे तो लोग जरूरत से दुगुना तिगुना दूध देते हैं । जब एक गांव में इसे बसाया तब इसने घोषणा की कि अन्न मूल फल आदि का त्याग कर–चुका हूं । सिर्फ दूध लूंगा । पहिले दिन मेरे शिष्यों ने उसे दूध पहुंचाया और इतना पहुंचाया कि बचरहा और वह प्रसाद के रूप में दर्शनार्थियों को दिया जाने लगा । इसके बाद गांव के लोगों ने दूध देना शुरु किया । मेरे शिष्यों ने घोषणा की कि बाबा सिद्ध पुरुष हैं । उन्हें जो जितना शुद्ध दूध पिलायगा उसे स्वर्ग में उतना ही अमृत पीने को मिलेगा । पर जिसके दूध में पानी होगा उसे स्वर्ग के अमृत में मूत पीना पड़ेगा । बस, अब बाबा के पास शुद्ध दूध ही आता है । चार पांच सेर तो बाबा ही पीजाता है । चार पांच सेर मेरे चेले पीजाते हैं ! एक दो सेर लोगों को प्रसाद रूपमें बांटा जाता है । प्रसाद लेनेवालों की भीड़ बहुत होगई है इसलिये अब छोटी चम्मच से दिया जाता है । दूधबाबा ५–६ सेर दूध पीकर खूब मस्त होगया है । क्योंकि दूध परिपूर्ण भोजन है । ५–६ सेर दूध पीने का अर्थ है सेर सवा सेर मावा खाना जिसमें एक पाव

ही तपस्या करना पड़ेगी कि तुम किसी से कोई बात न कर सकोगे। तुम मौनी बाबा बनकर रहोगे।

वह– मौन रहने से मेरी पूजा प्रतिष्ठा कैसे होगी ?

मैं– उसकी योजना मैं करा दूंगा। यों भी यह अकर्मण्यों और आलसियों का देश है। इस देश में जो साधु जितना अकर्मण्य होता है वह उतना ही महान बनजाता है। जगत कल्याण के लिये सत्य उपदेश देनेवाला कितना भी महान क्यों न हो वह मौनी से छोटा ही माना जाता है इसलिये ऐसे ऐसे लोग भी कभी कभी मौन रखते हैं। विश्राम के लिये मौन नहीं, प्रतिष्ठा के लिये मौन। ऐसे मौनियों का कुछ लोग फिर भी पीछा नहीं छोड़ते तब वे स्लेट पर या कागज पर लिखकर बात करते हैं। ऐसी बातचीत मौन की विडम्बना ही है। उसमें बहुत समय जाता है, बातचीत की अपेक्षा कई गुणा श्रम होता है फिर भी भरपूर भाव प्रकाशन नहीं होपाता; मौन का लक्ष्य भी नष्ट होता है, कष्ट बढ़ता है। पर कष्ट को तो इस देश में तप कहते हैं। इसलिये लिख–कर बात करने का कष्ट भी तप बनजाता है। जो लोग पूरे समय मौन नहीं रह पाते वे भी अमुक समय के लिये मौन रखते हैं। मौन रखने की कक्षा चलाते हैं। मौन की बड़ी बड़ी महिमा गाते हैं। यह दूसरी बात है कि मौन की महिमा बताने के लिये भी मौन तोड़ना पड़ता है अर्थात् बोलना पड़ता है। फिर भी प्रतिष्ठा मौन की ही ज्यादा रहती है। इसमें जो आडम्बर है, रहस्य का ढोंग है, उससे लोगों को और भी भुलाया जाता है। इसप्रकार मौन की

पूजा प्रतिष्ठा होती रही है जो एक तरह की हरामखोरी है।

वह– जब मुझ सरीखा अपढ़ भी मौन धारण कर सकता है तब मौन की इतनी महिमा क्यों ?

मैं– हजारों वर्ष पहिले इस देश में प्रवृत्ति का अतिरेक होगया था तब उसका इलाज करने के लिये निवृत्ति का अतिरेक आया । उसमें मन वचन काय की निश्चेष्टता की साधना होने लगी । मन को रोको, ध्यान लगाओ, शून्य बनाओ आदि के रूप में मन को निचेष्ट किया गया । मौन के द्वारा वचन को निश्चेष्ट किया गया । कायोत्सर्ग आदि के नाम से शरीर को निश्चेष्ट किया गया । और इस निश्चेष्टता की खूब प्रतिष्ठा की गई । चूंकि मोक्ष भी अनन्त निश्चेष्टता के रूप में वर्णित किया गया था इसलिये उसकी साधना के रूप में भी हर तरह की निश्चेष्टता को अपनाया गया । इस तरह यह देश अकर्मण्यों का या अकर्मण्यता का पुजारी बनगया । ऐसी हालत में तुम सरीखे अपढ़ भी अच्छी तरह से पुज सकते हैं, घोर तपस्वियों में अपनी गिनती करासकते हैं ।

इस तरह मैंने उसे मौनी बाबा बनाकर भेज दिया । तीन चार शिष्य उसके आगे पीछे गये । जिनने उस मौनी की पूजा की, वन्दना की । इस तरह उसकी तरफ लोगों का ध्यान खींचा । वे उसकी बड़ी महिमा गाते थे । मौन को सब से अधिक प्रभावी भाषा बताते थे । आधुनिक विज्ञान के साथ मौन का मेल बिठलाते थे । मौनी व्यक्ति टेलीपैथी से संसार को असाधारण सन्देश देता है । बीच बीच में यह कहते थे कि महाराज विश्वकल्याण के लिये किसी से बोलते नहीं ।

जिसदिन बोलेंगे संसार हिल जायगा, प्रलय आजायगा । संसार में इतनी शक्ति कहां है कि उनके शब्द झेल सके ।

मेरे शिष्य उसकी मामूली चेष्टाओं के बड़े गम्भीर और प्रभावक अर्थ निकालते थे । लोग अपनी मुराद पूरी कराने के लिये दर्शन के लिये आते थे । पूजा करते थे, भेंट चढ़ाते थे । मेरे शिष्य उन भेंटों से प्रसाद मंगवाकर बांट देते थे । थोड़ासा धन प्रसाद में जाता था बाकी मेरे शिष्य बांट लेते थे। कुछ यहां भी भेजते थे ।

कैसा मूढ़ देश है ! कोई आदमी बोलने का श्रम करते करते थक जाय, या विशेष चिन्तन मनन करने के लिये एकान्त में चुपचाप बैठजाय तो यह समझ में आता है । जहां मौन आदि विश्राम हैं या चिन्तन के लिये बहुत जरूरी हैं वहां उतने समय के लिये मौन का कुछ अर्थ है । पर मौन धर्म या तप नहीं है वह सिर्फ आवश्यकता के अनुरूप विश्राम है । और उसे विश्राम की दृष्टि से ही देखना चाहिये । उसे तपकी प्रतिष्ठा न देना चाहिये । मानलो कोई मौन लेकर कोई गम्भीर चिन्तन कर रहा है तो महत्ता चिन्तन की है, मौन की नहीं । उसने क्या चिन्तन किया उससे क्या जगत् कल्याण हुआ या होसकता है इसी पर चिन्तन का मूल्यांकन होगा । मौन के कारण कुछ नहीं ।

पर यह विवेक इस देश की मूढ़ जनता में सदियों तक न आयगा इसलिये दम्भियों की पूजा होती रहेगी और यह देश कर्मण्य और समृद्ध न बनेगा । सो न बने, मैं तो समृद्ध बन ही रहा हूं । और सैकड़ों को समृद्ध बना रहा हूं । जनता

अगर पशुओं से भी अधिक मूढ़ है तो इसकेलिये मैं क्या करूं ? जनता यदि पशु बनी रहना चाहती है तो मैं उसपर सवारी करने से क्यों चूकूं ?

२६– दूधबाबा

आज दूधबाबा के समाचार भी मिले । वह भी बहुत मजे में है । मुझे इसकी थोड़ी चिन्ता थी । क्योंकि ऐसा बेकार आदमी मुफ्त में समाज से चार छह सेर दूध हर दिन लेता रहे यह थोड़ा कठिन ही था । पर उसे तो लोग जरूरत से दुगुना तिगुना दूध देते हैं । जब एक गांव में इसे बसाया तब इसने घोषणा की कि अन्न मूल फल आदि का त्याग कर-चुका हूं । सिर्फ दूध लूंगा । पहिले दिन मेरे शिष्यों ने उसे दूध पहुंचाया और इतना पहुंचाया कि बचरहा और वह प्रसाद के रूप में दर्शनार्थियों को दिया जाने लगा । इसके बाद गांव के लोगों ने दूध देना शुरु किया । मेरे शिष्यों ने घोषणा की कि बाबा सिद्ध पुरुष हैं । उन्हें जो जितना शुद्ध दूध पिलायगा उसे स्वर्ग में उतना ही अमृत पीने को मिलेगा । पर जिसके दूध में पानी होगा उसे स्वर्ग के अमृत में मूत पीना पड़गा । बस, अब बाबा के पास शुद्ध दूध ही आता है । चार पांच सेर तो बाबा ही पीजाता है । चार पांच सेर मेरे चेले पीजाते हैं ! एक दो सेर लोगों को प्रसाद रूपमें बांटा जाता है । प्रसाद लेनेवालों की भीड़ बहुत होगई है इसलिये अब छोटी चम्मच से दिया जाता है । दूधबाबा ५–६ सेर दूध पीकर खूब मस्त होगया है । क्योंकि दूध परिपूर्ण भोजन है । ५–६ सेर दूध पीने का अर्थ है सेर सवा सेर मावा खाना जिसमें एक पाव

से ऊपर घी होगा। ऐसा पौष्टिक आहार यहां वड़े वड़े श्रीमानों को भी नहीं मिलता। जब कि यह निकम्मा मूर्ख बड़े गौरव के साथ ऐसा पौष्टिक आहार पाता रहता है। दूध का प्रसाद बांटकर वह कुछ रुपये पैसे भी पाजाता है। जिसके तीन हिस्से होते हैं। एक हिस्सा उसीके लिये जमा होता है। दूसरा हिस्सा उसके आसपास मड़राने वाले मेरे शिष्य लेते हैं। तीसरा हिस्सा मेरे पास आता है। ठगी की सब दूकानों की आमदनी मैंने इसी प्रकार बांटने का विधान वना दिया है।

दूधवाबा सब को आशीर्वाद देता है और आशीर्वादों की सचाई की गवाही मेरे भेजे हुए शिष्य देते हैं। फिर कुछ आशीर्वाद सच्चे कुछ झूठे निकलते ही हैं। सच्चों को दूध-वाबा की करामात समझा जाता है और झूठों को लोगों के पाप का उदय। इस प्रकार बाबा की सच्चाई फैलती जाती है।

लोगों को इसमें भी बड़ा चमत्कार मालूम होता है कि वाबा सिर्फ दूध ही पीता है। हालांकि किसी को इसकी पर्वाह नहीं है कि बाबा रात में दूध के सिवाय और क्या लेता है। पर अगर बाबा दूध के सिवाय और कुछ भी न लेता हो तो इसमें चमत्कार क्या है! पर अगर प्रचार की धूर्तता हो तो ऐसी बातों को भी चमत्कार मनवाया जासकता है। और लोगों को ठगा जासकता है। मेरे निर्देश से ठगी की यह दूकान भी खूब चल रही है।

२७– खड़ा बाबा

इस मूढ़ समाज में जब दूधबाबा सरीखे लोग पुज जाते हैं तब खड़े बाबा की दूकान चमक जाय तो इसमें आश्चर्य क्या है! खड़े बाबा को कुछ कठिनाई जरूर है पर कुछ तो उसे अभ्यास करा दिया गया है और कुछ ऐसी व्यवस्था करादी गई है कि जमीन पर लेटे बिना वह नींद लेले।

खड़े बाबा की ठगी की दूकान इसलिये चलगई है कि उसने घोषणा की है कि मैं दिनरात खड़ा रहता हूं। सोने के लिये भी मैं जमीन में नहीं लेटता। मेरे आदमियों की टोली उसे घेरे रहती है और प्रवास में जहां एकान्त मिलता है वहां उसे जमीन पर लिटाकर सोने की व्यवस्था कर दी जाती है फिर भी जहां किसी नगर में कई दिन पड़ाव पड़–जाता है वहां जरूर उसे कुछ कष्ट होता है। फिर भी मैंने उसके लिये कुछ व्यवस्था करादी है। झाड़ से दो तीन झूले बांधे जाते हैं। एक कमर तक ऊंचा होता है। दूसरा जरा और ऊंचा, तीसरा उससे कुछ और ऊंचा। रस्सियों को नीचे कपड़ों से लपेटकर ऐसा बना दिया जाता है जिससे वे रस्सियां चुभे नहीं। खड़ा बाबा झूले के सहारे खड़ा होजाता है और फिर तीनों झूलों पर झुकजाता है। तीनों झूलों पर उसका वजन आजाता है, पैरों पर शरीर का कोई वजन नहीं रहता। वे सिर्फ जमीन को छूते रहते हैं। इस प्रकार पैर के सिवाय सारा शरीर जमीन को न छूने पर भी वह औंधा लेटने की मुद्रा में होजाता हैं और पैर जमीन को स्पर्श करते रहते हैं। इस प्रकार खड़े होने की प्रतिज्ञा पलती

रहती है। और उसके सोने की व्यवस्था भी होती रहती है।

यह व्यवस्था मुझे इसलिये करनी पड़ी कि कभी कभी नगरवासी लोग खड़ा बावा की जांच के लिये आधी रात के बाद भी आते हैं। तो उन्हें यह दृश्य दिखाकर सन्तोष कराया जाता है।

इसके सिवाय उसे किसी के सहारे खड़े खड़े सोने की आदत भी डलवा दीगई है। वह साठ सत्तर अंश में झुके हुए तख्ते के सहारे खड़ा खड़ा सोलेता है। यद्यपि तख्ते के सहारे या झूले के सहारे सोता देखकर कुछ परीक्षकों को कुछ असन्तोष होता है परन्तु जनता ऐसे परीक्षकों की पर्वाह नहीं करती। वह ऐसे लोगों को नास्तिक कहकर उनकी निन्दा ही करती है। मेरे आदमी जनता में खड़ा बावा की महत्ता और तपस्या का इतना प्रचार करते हैं कि अगर कोई खड़ा बावा की आलोचना करता है तो लोग आलोचक की निन्दा ही करते हैं। साधारण हिन्दू समाज चमत्कारों का भूखा है। इसलिये उसे कोई झूठा चमत्कार भी बताया जाय तो वह उसे पूजने के लिये पागल की तरह दौड़कर आने लगता है। उसकी भीतरी मनोवृत्ति ऐसी है कि कहीं भी कोई चमत्कारी व्यक्ति मिलजाय कि उनके आशीर्वाद से मेरी सब समस्याएं हल होजायं। इस देश की जनता में, खासकर हिन्दुओं में, ऐसी हरामखोरी समाई हुई है कि वह संकट निवारण के लिये, अपनी उन्नति के लिये पुरुषार्थ पर कोई भरोसा नहीं करती। वह तो चाहती है कि उसके लिये मुझे कोई प्रयत्न न करना पड़े। बस, किसी चमत्कारी व्यक्ति के आशीर्वाद से सब काम

होजाय । जनता की इसी हरामखोरी के कारण कैसे भी झूठे और ऊटपटांग चमत्कार बताकर जनता को ठगा जासकता है उससे धन पूजा प्रतिष्ठा आदि वसूल किये जासकते हैं ।

इसके सिवाय हिन्दू समाज की यह मूढ़ता भी बड़ी अच्छी है अर्थात् मेरे काम की है कि वह कैसे भी निरर्थक कष्ट को तपस्या मान लेती है । इस कष्ट-सहन से दुनिया का क्या लाभ है इससे उसे कोई मतलब नहीं । उसने जहां देखा कि धर्म के नाम पर कष्ट सहा जाता है कि वह मान लेती है कि यह तपस्या है । ऐसे तपस्वी को वह परम पवित्र, पूज्य, वन्द-नीय, भगवान का खास आदमी मान लेती है । फिर उससे धन प्रतिष्ठा आदि लूटने में कोई बाधा नहीं । इसलिये मेरी दूकानें खूब पनप रहीं हैं ।

२८– ऊंचे हाथवाला बाबा

अनावश्यक कष्टों को तपस्या मानने की जो मूढ़ता समाज में है उससे उनमें अगर विचित्रता भी मिलजाय तो ठगी के लिये और भी सुभीता होता है । गत वर्ष मैंने एक ऐसे ही आदमी को तपस्वी बना दिया था । वह न तो शिक्षित था न सुन्दर । कोई विशेष गुण उसमें नहीं था । इस-लिये मैंने उसे यह तपस्या बतलादी कि तुम एक हाथ दिन-रात ऊंचा रक्खा करो । बस ! तुम्हारी गिनती तपस्वियों में होजायगी और तुम जहां जाओगे तुम्हारे देखने के लिये भीड़ इकट्ठी होने लगेगी ।

पहिले तो वह झिझका कि दिनरात हाथ कैसे ऊंचा रक्खा जायगा । पर मैंने समझाया कि कष्ट थोड़े ही दिनों

का है । बाद में हाथको आदत पड़जायगी कि वह नीचे होगा ही नहीं । लम्बे अरसे बाद हाथ नीचा करने को कई दिन मालिश करना पड़ेगी और धीरे धीरे ही नीचा होसकेगा। पर तब तक तुम तपस्वी के रूप में गांव गांव में पुज जाओगे।

उसने ऐसा ही किया। कुछ समय बाद उनका हाथ ऊपर ही खड़ा रहगया। अब वह नीचे आता ही नहीं है। और उसके दर्शन के लिये भीड़ आने लगी है । कुतूहल से तो आती ही है पर बहुत से लोग उसे तपस्वी समझकर वन्दना करते हैं, भेंट चढ़ाते हैं । उसके साथ मेरा एक शिष्य भी रहता है जो भेंटों का हिसाब रखता है। नियमानुसार उसके तीन हिस्से होते हैं ।

ऊपर हाथ उठाने से न उसका कोई भला है न जगत् का कोई भला है। फिर भी मूढ़ जनता जब उसकी कद्र करती है तब उसे लूटने में क्या हर्ज है।

२६– नीरस बाबा

नीरस बाबा का जो समाचार आया है उससे पता लगा है कि वह एक तरह का संन्यासी बनगया है । बुजुर्ग है । वह इसी दम पर खा कमा रहा है कि उसने घी तेल गुड़ शक्कर का त्याग कर दिया है। इससे उसकी प्रतिष्ठा भी खूब है । ज्यादातर वह स्त्रियों में ही बैठता है और उन्हें ही कुछ उपदेश देता है। उपदेश कुछ बुरे नहीं होते पर किसी काम के भी नहीं होते । ईश्वर का नाम लो, जाप जपो आदि बातें ही सुनाता है। पर रस त्याग करने पर भी है ऐसा चालाक कि बातों में स्त्रियों को ऐसा बहलाता है कि घी

शक्कर आदि का त्यागी होने पर भी बड़े मजे का भोजन करता है। और अपनी निष्पृहता रसत्याग आदि की दुहाई भी देता रहता है।

अपनी ग्रामीण बोली में स्त्रियों से कहता रहता है कि इन इन्द्रियों को का पोखने, घी शक्कर के बिना कोई आदमी मरता थोड़े ही है। थोड़ी सी बादाम कुचलकर डालने से घी का काम चलसकता है, किशमिश डालने से ही शक्कर का काम चलसकता है, हमें घी शक्कर का गुलाम थोड़े ही बनना है। उसकी जगह जो भी मिलजाय वही सही। हमें तो शरीर के टिकाने से मतलब, उसे भगवान के भजन में जोतने से मतलब, इन्द्रियों को पोखकर का करने हैं।

और अचरज की बात है कि इस देश के लोग उसे घी की जगह बादाम, शक्कर की जगह किशमिश देकर उसे परम त्यागी मानते रहते हैं। वह कई गुणी कीमत का माल उड़ाता है फिर भी त्यागी तपस्वी स्वादजयी कहलाता रहता है।

शुरु शुरु में जब मैंने अपना एक शिष्य उसके पास भेजा था तब उसने उसके भक्तों को जरूर सुझाव दिया था कि बाबा शक्कर नहीं खाते तो किशमिश सही, घी नहीं खाते तो बादाम सही। इस देश के अन्धभक्तों ने, खासकर स्त्रियों ने, उस सुझाव को अपना लिया है। इस देश के पुरुष भी जब मूढ़ता में कम नहीं हैं तब स्त्रियों का क्या कहना! ठगी के ये छोटे मोटे प्रयोग भी होते रहते हैं। सो अच्छा ही है। चतुर ठगों का कुटुम्ब जितना भी बढ़े उतना ही अच्छा। इससे मेरा प्रभाव ही बढ़ता है।

३०– गोपाल बाबा

मेरे यहां एक शिष्य गायों की रखवाली करता था। एक दिन मेरा ध्यान उसकी एक विशेषता पर गया। उसने गायों के नाम रख छोड़े थे। और गायों को ऐसा सिखा रक्खा था कि उसका नाम लेते ही उसके पास गाय दौड़ी आती थी। उसकी यह विशेषता देखकर मैंने सोचा यह धर्म-ठगी की एक अच्छी दूकान खोलसकता है। जो गायें कम दूध देने लगी थीं या दूध देना बन्द कर रही थीं मैंने वे सब गायें उसे देकर कहा– आओ, तुम भी एक बाबा बनजाओ।

उसने पूछा– इन बिना दूध की गायों को लेकर क्या करूंगा ?

मैंने कहा– तुम इनको पूड़ियां खिलाना और गोपाल बाबा बन जाना।

वह– पूड़ियां मैं कहां से लाऊंगा ?

मैंने– इतने दिन तुम्हें यहां रहते होगये पर इस देश की मूर्ख जनता की नब्ज नहीं टटोल पाये। अरे, जब तुम बाबा बनकर गायों का झुंड लेकर किसी शहर में पहुंच जाओगे। और एक एक का नाम लेकर बुलाओगे और नाम लेते ही जब वे दौड़ी आयंगी तब पहिले दिन जो तुम उन्हें खिला-ओगे वही दूसरे दिन से जनता उन्हें खिलाने लगेगी।

वह– पर पहिले दिन कौन खिलायगा ?

मैं– उसकी चिन्ता तुम न करो। मेरे आदमी टोकनी-भर पूड़ियां तुम्हें लेकर देदेंगे तुम गायों को बांट देना। दूसरे दिन से टोकनियों से पूड़ियां आने लगेंगी। गोसेवा गोभक्ति

के गीत भी मेरे आदमी गायेंगे। गायें भी तुम्हारे अनुशासन में हैं। तुम सच्चे गोपाल हो, श्री कृष्ण के अवतार हो, इस तरह तुम्हारी ख्याति होजायगी और तुम खूब पुजने लगोगे।

वह- ठीक है गुरुदेव, आपकी योजना के अनुसार मैं काम करता हूं।

मैंने उसे पक्के छप्परवाली अच्छी गाड़ी बनावादी जिसमें वह बैठ भी सकता था, सो भी सकता था, बहुतसा सामान भी रख सकता था।

अब उसके जो समाचार आये हैं वे बड़े उत्साह-वर्धक हैं। उसने गायों की संख्या बढ़ाली है और उन्हें नाम से पुकारने पर आना सिखला लिया है। गंगा यमुना सरस्वती लक्ष्मी नर्मदा सिन्धु कावेरी काली पार्वती आदि नाम उन गायों को दिये गये हैं। वह नगर नगर गांव गांव घूमता है। उसकी और उसकी गायों की, साथमें मेरे आदमियों की गुजर तो हो ही जाती है, साथ ही बहुत कुछ बच भी जाता है।

सर्कस में शेर बाघ हाथी घोड़े आदि सिखाये जाते हैं। इसमें बड़ा खर्च होता है, पर खर्च मुश्किल से ही निकलता है। कलाकारों को पूज्यता और प्रतिष्ठा तो मिलती ही नहीं है। परन्तु धर्मठगी की दूकान में इतना खर्च नहीं होता है और मुनाफा भरपूर होता है। और देवों के समान पूज्यता मिलती है वह अलग।

सर्कसवालों का सब से बड़ा अपराध यह है कि वे ईमानदार हैं, धर्मठगी करना नहीं जानते। और मेरे आदमियों का सबसे बड़ा गुण यह है कि वे बेईमान हैं; ठगी करना जानते हैं। इससे जनता उन्हें मन से पूजती है। इस देश

की जनता की मूढ़ता को देखते हुए ऐसा मालूम होता है कि ईमानदार बनना ही अपराध है। ठगी की राह पर जो चलते हैं वे ही मजे में हैं। इसलिये मैं भी मजे में हूं।

३१- नारीदूर बाबा

एक शिष्य ने गत वर्ष एक विचित्र ही चमत्कार दिखाने की इच्छा प्रगट की थी। और मैंने उसे अनुमति भी देदी थी। उसने प्रतिज्ञा की थी कि मैं नारियों से बात न करूंगा। और नारियां मुझ से सात हाथ दूर रहना चाहिये। अपनी इस प्रतिज्ञा के कारण ही वह अच्छी तरह पुज रहा है। और आश्चर्य तो यह है कि नारियां ही उसे अधिक पूजती हैं। इस देश में नारियों के कुछ ऐसे संस्कार पड़ गये हैं कि जो उनसे घृणा करता है, उनकी अधिक से अधिक निन्दा करता है, उनके विषय में उनकी भक्ति बढ़जाती है। ढाई हजार वर्ष पहिले इस देश में जो अनेक श्रमण धर्म पैदा हुए उनने स्त्रियों की बड़ी निन्दा की। उन्हें नरक की खानि आदि कहा। धार्मिक क्षेत्र में भी उनके अधिकार छीने। विदुषी से विदुषी और पुरानी साध्वी को कल के बच्चे और अल्पज्ञानी साधु को बड़ा स्थान दिया; उसे साध्वी से वन्दनीय बतलाया। सुहागरात के दिन पत्नी को छोड़कर साधु बनने-वाले विश्वासघाती को परमत्यागी कहकर प्रशंसित किया, फिर भी ऐसे नारी-विद्वेषी धर्मों को माननेवाली नारियां कम नहीं हैं। आश्चर्य तो यह है कि पुरुषों की अपेक्षा नारियां ऐसे धर्मों में अधिक भक्ति रखती हैं। अगर नारियों में थोड़े भी आत्मगौरव की भावना होती तो उनने ऐसे धर्मों

को अस्वीकार कर दिया होता । कदाचित कौटुम्बिक परि-स्थिति के कारण उन्हें ऐसे धर्मों या गुरुओं साधुओं में शिष्टा-चार निभाना पड़ता तो भले ही निभातीं पर अनुराग भक्ति न होना चाहिये थी। परन्तु ऐसे नारी-विद्वेषी तीर्थंकरों और उनके धर्मों को भक्त नारियां ही अधिक हैं । नारी की इस पशुता को देखते हुए नारीदूर बाबा का पुजजाना आश्चर्य की बात नहीं है ।

नारियां उसके दर्शन को आतीं हैं, सात हाथ दूर रहकर उसे भेंट चढ़ाती हैं, प्रणाम करती हैं, आशीर्वाद लेती है। नारीदूर बाबा ऐसा पक्का ढोंगी है कि दो चार वर्ष की बच्ची को भी पास नहीं आने देता। और उसकी इस कट्टरता के कारण भी उसकी पूजा प्रतिष्ठा और बढ़जाती है ।

आश्चर्य तो यह है कि नारियों से दूर रहकर वह नारियों का अपमान ही करता है, जगत को कुछ देता नहीं है, न बहुत ज्ञानी है, फिर भी इस अद्भुत ढोंग के कारण ही बहुत पुज जाता है। कैसी मूढ़ है यहांकी जनता ! पर उसकी मूढ़ता तो अपने लिये वरदान ही है।

आश्चर्य तो यह है कि नारीदूर बाबा नारियों से दूर रहकर भी नारी-विलास से वंचित नहीं है । उसकी भी एक प्रेयसी है जो कभी कभी रात उसी के साथ गुजारती है। पर इसके कारण उसे रात में वेषभूषा बदलना पड़ती है । उसके बाल बहुत लम्बे नहीं हैं। उस रात वह कपड़े स्त्रियों के नहीं पुरुषों के पहिनती है। सिरपर साफा बांधती है जिससे बाल ढक जाते हैं । आंखों में कज्जल नहीं सुरमा लगाती है।

ललाट पर विन्दी नहीं तिलक रहता है । रात में कोई न कोई सेवक नारीदूर बाबा की सेवा में रहता है । इसकेलिये सेवकों की बारी बंधी हुई है। और सात दिन में एक दिन प्रेयसी की भी बारी आती है। वह पुरुष वेप में वेधड़क उसके कक्ष में प्रवेश करती है । कक्ष में भीतर जाकर वह पुरुष के कपड़े उतार देती है । वहां नारी के वस्त्र तो रहते नहीं हैं, और जिस कार्य के लिये वह आती है उसमें कपड़ों की जरूरत है भी नहीं । वह रातभर नग्न विहार करती है। इस प्रकार नारीदूर बाबा नारीदूर बाबा भी बना हुआ है और नारी के साथ मौज भी खूब करता है। फिर भी उसकी पूजा प्रतिष्ठा में कोई कमी नहीं है। उसकी प्रेयसी दिन में नारी वेप में उससे सात हाथ दूर ही रहती है । मजा है !

नारीदूर बाबा एक दिन मेरे दर्शन के लिये आया था और तभी उसने अपनी इस वेदना की बात कही थी। खाने को बढ़ियां मिलता है, पूजा प्रतिष्ठा खूब है, काम कुछ करना नहीं पड़ता पर रात में नींद नहीं आती है। ब्रह्मचर्य पलता नहीं है, स्वप्नदोप बार बार होता है । दिल बड़ा बेचैन रहता है । इसलिये उसने मुझसे प्रार्थना की कि ऐसा कोई रास्ता निकालिये कि मुझे प्रेयसी भी मिलजाय और नारीदूर बाबा भी बना रहूं ।

उसकी प्रार्थना से पसीजकर मैंने एक ब्रह्मविहारिणी यहां से भेजदी थी। नारीदूर बाबा अपनी आमदनी का बहु-भाग उस ब्रह्मविहारिणी को देता है, मेरे आश्रम को भी भेजता है, खुद भी बचाता है । दम्भी साधुओं को इस देश में पैसे की कोई कमी नहीं है। और प्रतिष्ठा भी भरपूर मिलती है।

३२– सिद्ध बाबा

कुछ दिन पहिले एक जादूगर मेरे पास आया और उसने जादू के बहुत से खेल दिखाये। ताश के पत्तों के खेल दिखाये। अपने हाथ में रूमाल में दबी हुई अंगूठी गायब कर देना और दूर खड़े हुए किसी आदमी के पाकिट में वह अंगूठी निकालना। भरे हुए गिलास में चावल बढ़ते जाना फिर गिलासमें से पानी गिराना फिर उस गिलासमें से पानी की जगह फूल बरसाना आदि उसने बहुत से खेल दिखाये। कुछ मेरी समझ में आये कुछ नहीं आये। मंने प्रसन्न होकर उसे २० रु. दिये। और पूछा कितना कमा लेते हो ?

वह बोला– किसी तरह गुजर होजाती है।

मैं– बस ! गुजर ही होपाती है ! लखपति नहीं बनपाये !

वह– लखपति क्या हजार पति भी नहीं।

मैं– और प्रतिष्ठा कितनी पासके ?

वह– पेट के लिये धंधा करने में कैसी प्रतिष्ठा।

मैं– इतना हुनर रखकर के भी इतने मूर्ख क्यों हो ?

वह– फिर क्या करूं ?

मैं– जितने जादू के खेल तुम्हें आते हैं उनमें से दो चार को लेकर ही तुम सिद्ध बाबा बन सकते हो। बस, वेष साधु का लेलो। और इस समय जो एक आदमी तुम्हारे साथ है वैसा एकाध और बढ़ा लो। फिर जो खेल तुम पेट के लिये दिखाते हो उनमें से कुछ ही खेल तुम सिद्ध बाबा बनकर दिखाने लगो तो देवता की तरह पुजजाओगे। और वैभव विलास की भी तुम्हें कमी न रहेगी। हर दिन हजारों के वारे न्यारे होने लगेंगे।

वह– मुझे जादू की कला तो आती है पर ठगी की दूकान चलाने की कला नहीं आती । न उसके लायक साधन हैं ।

मैं– वह कला मैं सिखा दूंगा । उसके लिये कुछ आदमी भी दे दूंगा । जो तुम्हारे भक्त बनकर तुम्हारी सिद्धता का प्रचार भी करेंगे और जादू के खेल में जो दुनिया को धोखा देना पड़ता है उसमें मदद भी करेंगे ।

वह तैयार होगया । तब से वह सिद्ध बाबा बनकर खूब पुजरहा है । मामूली गधे जब पुजजाते हैं तब वह तो होश्यार जादूगर है । कभी कभी वह दर्शकों में दस दस के नोट बनाकर बांट देता है, कभी ईंट के टुकड़े कर पेड़े की तरह बांट देता है, कभी कंकड़ियों को इलायची बनाकर बांट देता है । और तब उसके चरणों मे हजारों चढ़ने लगते हैं, उसके ही आदमी भक्त बनकर चढ़ाना शुरु कर देते हैं तब जनता भी चढ़ाती है । और अब तो जनता में ही उसकी इतनी प्रतिष्ठा होगई है कि लोग स्वयं ही उसके चरणों में खूब भेंट चढ़ाने लगते हैं । उसके दर्शनके लिये लोग तरसते हैं । पहिले जब जादूगर था तब ईमानदार था । कह देता था कि यह सब पेट के लिये हाथ की सफाई के खेल करने पड़ते हैं । पर अब उसने यह ईमानदारी छोड़दी है । अब वह सिद्ध पुरुष बनगया है, ईश्वर का खास आदमी बनगया है । ये सब सिद्धियां ईश्वरने उसे दी हैं, इस प्रकार प्रचार करता कराता है । अब वह मामूली जादूगर नहीं, महान दिव्य पुरुष है ।

मेरे प्रति कृतज्ञ है । खुद भी पैसेवाला होगया है । अपने

आदमियों को भी भरपूर पैसा देता है। मेरे पास भी भेजता रहता है।

प्रकृति के या विज्ञान के नियमों के विरुद्ध दुनिया में कुछ नहीं होसकता। मनुष्य के हाथ में कोई चमत्कार नहीं है। यह सीधी सच्ची बात जब दुनिया मानने को तैयार नहीं हैं, वह खुद ही ठगी जाना पसन्द करती है, तब उसे क्यों न ठगा जाय ?

३३- पाताली भगवान

इस देश की जनता वर्तमान की अपेक्षा भूत की अधिक पुजारी है। वर्तमान की सुन्दरता उसे मोह नहीं सकती और भूत की असुन्दरता भी उसे मोह लेती है। इसका कारण यह है कि धर्मशास्त्रों ने भूतकाल के खूब गीत गाये हैं। यह अव-सर्पिणी काल है, दुनिया पतनशील है, पहिले सतयुग था फिर त्रेता द्वापर कलियुग में मनुष्य गिरता चला जाता है। इस-प्रकार भूतकाल की जो भक्ति जनता के मनमें बसी है उससे वर्तमान पर भी भूत की छाप लगाकर प्रचार करने की जरू-रत मालूम होती है।

कुछ वर्ष पहिले एक अर्धशिक्षित व्यक्ति आया था। बोला- मुझसे और कुछ तो हो नहीं सकता, मैं तो सिर्फ पुजारी बनसकता हूं। आप कहीं मन्दिर बनवादें तो मैं वहां पुजारी बनकर अपनी गुजर करने लगूं।

मैंने कहा- मैं कहीं मन्दिर बनवादूं और वहां तुम्हें पुजारी बनाकर रखदूं तो इससे तुम्हारी गुजर न होगी। न लोगों का तुम्हारे प्रति और तुम्हारे मन्दिर के प्रति आकर्षण बढ़ेगा। दूकान जमाने के लिये कोई चमत्कार दिखलाना पड़ेगा।

वह– मैं क्या चमत्कार दिखला सकता हूं ?

मैं– इस देश की जनता इतनी मूढ़ और चमत्कारों की भूखी है कि चमत्कार के नाम से उसे कोई भी चीज देदो वह भुखमरों की तरह उस पर टूट पड़ेगी । पुरुषार्थ से कोई चीज पाना या पैदा करना वह अपना दुर्भाग्य समझती है । बिना पुरुषार्थ के भक्ति चापलूसी आदि करने से जो उसे मिलता है इसी हरामखोरी को वह सौभाग्य समझती है । पर इससे वह धन समय शक्ति और गौरव ही गमाती है । लेकिन जनता का यह दुर्भाग्य ही हमारा सौभाग्य है ।

वह– तो फिर वतलाइये कोई चमत्कार ।

मैं– तुम पाताली भगवान का मन्दिर वनवाओ । उसीके पुजारी वनो । खूब आमदनी होगी ।

वह– पाताली भगवान का तो मैंने आज तक नाम भी नहीं सुना ।

मैं– पाताली भगवान कोई अलग भगवान नहीं है । किसी भी भगवान को पाताली भगवान बनाया जासकता है ।

वह– कैसे बनाया जासकता है ?

मैं– किसी भी भगवान की मूर्ति को जमीन में गाड़ दो । फिर कहो कि भगवान ने मुझे सपना दिया है कि मैं अमुक जगह हूं और वाहर आना चाहता हूं । तुम लोग तैयारी करो, मुझे निकालो । यह बात गांववालों से वार वार कहो ।

वह– पर क्या गांववाले मेरी वात पर विश्वास करेंगे ? क्या वे यह न कहेंगे कि भगवान तो सर्वशक्तिमान है उसे मिट्टी में कौन दवाकर रखसकता है । क्या सर्वशक्तिमान परमात्मा खुद ही मिट्टी भेदकर ऊपर नहीं आसकता ?

मैं– पर लोगों के गधेपन से तुम अपरिचित मालूम होते हो। लोगों में इतना विवेक होता तो धर्म के नामपर ठगी की इतनी दूकानें न चलतीं। लोग ऐसा तर्क वितर्क नहीं करते हैं। वे चमत्कार की आशा में अपनी हरामखोरी को सफल वनाने के सपने देखने लगते हैं।

वह– अच्छी बात है। बतलाइये, यह काम मैं किस तरह करूं ?

मैं– इसके कई तरीके हैं। एक तरीका यह है कि एक गहरा खड्डा बनाया जाय और उसमें चने भर दिये जांय। ऊपर मूर्ति हो, जो मिट्टी से दबी हो। वह जगह पानी से गीली कर दी जाय। वहां इतना पानी छोडा जाय जिससे मिट्टी के नीचे के चने भींग जाय। उसके थोड़ी देर बाद वहां सामूहिक प्रार्थना का कार्यक्रम रक्खो। थोड़ी देर में चने फूलने लगेंगे और मूर्ति ऊपर उठने लगेगी। बस, फिर जय जयकार करने लगना। भगवान का प्रकटीकरण होगा जो वड़ा चमत्कार होगा। साथ ही यह चमत्कार भी उसमें जुड़ जायगा कि भगवान खुद ही ऊपर आये हैं। इससे उन लोगों को उत्तर मिलजायगा जो कहते थे कि भगवान क्या खुद ही ऊपर नहीं आसकते ?

वह– पर कहीं चनेवाली बात खुलगई तो ? किसी ने वहां कुछ गहरी खुदाई करदी और चनें निकल पड़े तो क्या होगा ?

मैं– नहीं निकल पड़ेंगे। इस बात का इन्तजाम तुम्हें रखना पड़ेगा कि कोई मूर्ति को हाथ न लगाये, वहां गहरी खुदाई न करदे।

वह– रक्खूंगा। परन्तु क्या कोई और सरल तरीका नहीं है जिसमें यह जोखिम न हो।

मैं– वहुत तरीके हैं। सरल तरीका यह है कि जमीन में चार छह हाथ गहरा गड्ढा किया जाय और उसमें नीचे मूर्ति रखदी जाय। उसे मिट्टी से दबा दिया जाय। मिट्टी पोची न रहे। इसके लिये मिट्टी को अच्छी तरह दबाना चाहिये। गड्ढा खोदने पर जो कंकड़ पत्थर आदि उसमें निकलें वे भी मिट्टी के साथ दवा देना चाहिये। इसके वाद वहां कुछ जंगली पौधे लगा देना चाहिये। वर्षा में वे अच्छी तरह लग जायंगे और उनकी जड़ें भी मिट्टी में गहरे तक चली जायंगी। इस प्रकार वहां की जमीन बिलकुल स्वाभाविक रूपमें आजा–यगी। फिर तुम स्वप्न की वात कह कर लोगों को इकट्ठा करके जमीन खोदना। वस, पाताली भगवान निकल आयंगे। तुम उसी जगह भगवान का चबूतरा बनाकर पाताली भग–वान को विराजमान कर देना। फिर भगवान को वर्षा धूप ठंड से वचाने के लिये लोग मन्दिर बनवा देंगे। और ऐसे चमत्कारी भगवान से नाना तरह की याचनाएं करने लगेंगे। और तुम पुजारी बनकर पाताली भगवान के मुनीम बनजाओगे और तुम्हारे मार्फत ही पाताली भगवान लोगों के साथ लेन–देन करेंगे।

उस समय ऐसा ही हुआ। दो वर्ष में वहां भगवान का मन्दिर वनगया है। पुजारी भी सम्पन्न होगया है। वह मेरा हिस्सा देना कभी नहीं भूलता। हरामखोर लोग भगवान को रिश्वत देकर धन पैसा सन्तान आदि मांग रहे हैं। उन्हें मिलता है

वही जो वे पुरुषार्थ से कमाते हैं पर उसका श्रेय पाताली
भगवान को मिलता है। और जो रिश्वत व्यर्थ जाती है उसका
दोष रिश्वत देनेवालों के ही सिर मढ़ दिया जाता है।

धर्मठगी पूरी तरह सफल है ।

३४– नामबेंक

आज संस्थान में नामबेंक की बृहत्सभा थी । दो ढाई
वर्ष पहिले बहुत से बेकार शिष्यों को कामपर लगाने के लिये
मेरे मन में नामबेंक की कल्पना आई थी । मैंने उस दिन
लोगों से कहा था कि यदि तुम अपना कल्याण चाहते हो तो
भगवान को प्रसन्न करो । और भगवान को प्रसन्न करने का
सब से अच्छा तरीका यह है कि उसका नाम जपो ! अपनी
तरफ से पैसा देकर दूसरों से भी जाप कराया जासकता है
इसलिये जो लोग समर्थ हैं, पैसेवाले हैं वे लोगों को अपनी
तरफ से नामजप करने के लिये नियुक्त कर सकते हैं । तुम्हारे
प्रतिनिधि जो जप करेंगे उसका उन्हें पैसा मिलेगा और उसका
पुण्य तुम्हें मिलेगा । तुम्हे धर्मलाभ है उन्हें अर्थलाभ है । मेरी
इस योजना से मेरे सैकड़ों शिष्यों को मजदूरी मिलने लगी ।

परन्तु कुछ लोगों के मनमें यह बात खटकती रही कि
भाड़ेतू जप से मनुष्य का क्या कल्याण होसकता है ? क्या
हम पैसा देकर अपनी तरफ से दूसरे को पढ़ने को भेजदें तो
क्या उसकी पढ़ी हुई विद्या हमारे काम आजायगी ? इस–
प्रकार के लोग भाड़ेतू जप कराना पसन्द नहीं करते । ऐसे
लोगों के लिये मैंने नामबेंक की योजना निकाली थी ।

लोग दिनभर बैठे बैठे अपना धंधा करते हैं । और जब

कोई ग्राहक नहीं होता तव भगवान का नाम लिखते हैं। इसप्रकार दिन में हजारों नाम लिख डालते हैं। कोई राम का नाम लिखते हैं कोई कृष्ण का, कोई शिव का कोई और किसी इष्ट देव का। उनके नाम वेंक में जमा किये जाते हैं। और जिनके वहुत नाम जमा होते हैं उन्हें एक अभिनन्दन पत्र दिया जाता है। हर एक के पास एक पास वुक तो होती ही है जिसमें उसके द्वारा जमा किये हुए नामों की कुल संख्या लिखी रहती है।

मैंने सवको समझा दिया है कि तुम्हारे जितने नाम जमा होंगे परलोक में परमात्मा उन नामों के वदले में वैभव आदि देगा। यह परमात्मा का खाता है इसमें कोई घपला नहीं है। एक नाम पुण्य की एक मात्रा है जो रुपये से अधिक कीमती है।

यह वेंक खूब चला है। वेंक चलाने के लिये जो खर्च आता है उसे पूरा करने के लिये लोग खूब चन्दा भी देते हैं। भला पुण्य की मात्रा के रूप में जव लाखों करोड़ों जमा होरहे हैं तव सैकड़ों हजारों का चन्दा देना क्या वड़ी वात है। इस प्रकार मेरा धंधा खूव चल रहा है। और वहुत भक्त शिष्य इस कार्य में खप रहे हैं।

इस वेंक से लोगों के मन को वहुत तसल्ली मिलती है। उन्हें इसका भरोसा रहता है कि लाखों करोड़ों पुण्य मात्राएं भगवान के यहां हमारे खाते में जमा होगई हैं। इसलिये जव उन्हें कोई पाप करना होता है तव उन्हें उसके फल की चिन्ता नहीं होती। वे सोचते हैं कि इस काम में हजार पांच सौ

पुण्य मात्राएं नष्ट होंगीं पर मेरी तो पुण्यमात्राएं लाखों करोड़ों में हैं फिर पापफल की क्या चिन्ता । इस प्रकार इन नामबेंकों से दुनिया में पाप का रास्ता साफ होता है । पाप करके भी मनुष्य पाप से चिन्तित नहीं होता । इसलिये वे बेंक के लिये हजारों रुपया देते भी हैं। इतना सस्ता पुण्य लेने को कौन तैयार नहीं होगा ?

यह ठीक है कि नामबेंक में नाम जमा करानेवाले नरक जायंगे । क्योंकि नाम जमा करने से न पुण्य होता है, न पर-मात्मा इतना भोला या मूर्ख है जो मनुष्य के कर्तव्य अकर्तव्य पर विचार न करके सिर्फ नाम लिखने से किसी को पुण्यात्मा मानले । पुण्य तो दुनिया का भला करने से होता है । पर परमात्मा का नाम लिखने से किसी का कोई भला नहीं । इस-लिये परमात्मा की दृष्टि में वह पुण्यात्मा भी नहीं । परन्तु झूठे पुण्य के भरोसे जो वह पाप कर जाता है वह ठोस है । इस प्रकार पुण्य उसके पास होगा नहीं और पुण्य के भरोसे पाप असीम होगा, ठोस होगा, इसलिये उसे नरक में ही जाना पड़ेगा । सो जाया करे । जब दुनिया इतनी मोटी बात भी नहीं समझती, वह अपने को धोखा देने को तुली हुई है तब मैं ही क्यों चूकूं ? ।

नाम बेंक की बृहत्सभा की बैठक में यह रहस्य तो मैंने खोला नहीं । सिर्फ जगह जगह के नाम बेंकों का विवरण सुना । पता लगा कि नाम बेंकों में खूब नाम जमा होरहे है और सभी बेंकों को अच्छी आमदनी है। मैंने इस सफलता के लिये सबको बधाई दी । सबने मेरे प्रति कृतज्ञता प्रगट की और मेरा जय जयकार किया ।

३५– तपसीजी

एक अपढ़ को तपसी जी के नाम से मैंने पुजवा दिया है। वह किसी शास्त्र का जानकार नहीं था, न उस तरफ उसकी रुचि थी। फिर भी चाहता था कि मेरी खूब पूजा प्रतिष्ठा हो। इस देश के हिन्दू, खासकर जैन लोग तपसी जी कहलाने वाले मूर्खों को पूजनेके लिये बड़े व्याकुल रहते हैं। अगर कोई लम्वे उपवास करता है, या वहुत दिनों तक सिर्फ छाछ पीकर ही रहता है तो परम तपस्वी मान लिया जाता है। और तपसी जी के नाम से खूब पुजता है। मैंने इस अपढ़ को यही कार्यक्रम देदिया। यह सिर्फ पानी के आधार से आठ आठ दस दस उपवास कर जाता है। और इसके दर्शनों की भीड़ लगी रहती है। यह आशीर्वाद के नाम पर जो कहदे वह सच मान लिया जाता है। मैंने इसको सिखा दिया है कि वहुत आशीर्वाद न दिया कर, न वहुत साफ आशीर्वाद दिया कर। गोल गोल या लचीले आशीर्वाद दिया कर। तेरा कल्याण होगा, तेरे संकट टल जायंगे, आनेवाले संकट रुक जायंगे या घट जायंगे आदि ऐसे आशीर्वाद दिया कर! जिन्हें हर हालत में सार्थक सिद्ध किया जासके। यह मेरी बतलाई हुई नीति पर चलता है और तपसी जी के नाम से देवता वना हुआ है।

कैसा मूर्ख समाज है! सोचता है कि अनावश्यक कष्टों को देखकर देवताओं का दिल पिघलता है। देवताओं को वह ऐसी ही आसुरी वृत्ति का प्राणी वना डालता है जिन्हें दूसरों को दुःख उठाते देखकर सन्तोष या आनन्द प्राप्त होता

है । इस तरह अनावश्यक कष्ट उठाने से न देवताओं का लाभ है, न जगत का लाभ है, न तपसी जी कहलाने वाले का लाभ है; फिर भी लोग तपस्या के नाम पर कष्टों का वृथा भार लादते हैं । जैन समझते हैं कि ऐसे कष्टों से पाप की निर्ज़रा होती है । क्योंकि पाप का फल दुःख ही तो है । जब दुःख स्वेच्छा से उठा लिया तो उसका फल चुक गया । क्या विचित्र भोलापन है ! एक आदमी को बुखार आये और उसे दूर करने के लिये कोई दीवाल से टकराकर सिर फोड़ले, तो वह दुःख तो सहजायगा पर इससे वुखार दूर न होगा । कार्य कारण भाव का विचार किये बिना किसी भी प्रकार का कष्ट उठा लेने से पाप की निर्जरा नहीं होती । यह समझदारी न होने से बेकार के कष्ट ये लोग सहते हैं और दूसरों पर भी कष्ट लादते हैं । क्योंकि तपसी तो कष्ट उठाता है परन्तु उसकी सारसम्हाल करने के लिये दूसरों को भी बहुत कष्ट उठाना पड़ते हैं । सब समाज की मूर्खता और कुछ लोगों की प्रतिष्ठा--लोलुपता का परिणाम है ।

सो समाज वह दुष्परिणाम भोगा करे, मुझे उसकी कोई पर्वाह नहीं है । मैंने तो उस बुद्दू को तपसी जी बन-वाकर समाज से पुजवा दिया, प्रतिष्ठा प्राप्त करादी । इससे मेरी भी प्रतिष्ठा बढ़ी । साथ ही और लाभ भी हुआ । दुनिया जहन्नुम में जाना चाहती है, जाती है, सो जाये मैं अपना लाभ क्यों छोड़ूं ?

०-⁀⁀-०

३६– निमित्त उपादान

आज जैनसमाज के वहुत से सम्भ्रान्त व्यक्ति आये थे। उनमें अधिकांश धनी लोग थे। एक धनी तो वहुत बुजुर्ग थे, करोड़पति थे, और जैन शास्त्रों के इतने ज्ञाता भी थे कि कभी कभी शास्त्रवाचन भी करते थे। वहुत देर तक तत्त्व–चर्चा होती रही। अन्त में उन श्रीमान जी ने पूछा कि हिन्दू धर्म में पापमाफी के क्या कार्यक्रम हैं जिनके द्वारा मनुष्य पाप करके भी उनसे मुक्त होसके और पापी को एक तरह की सान्त्वना मिल सके।

मैंने कहा– वहुत से कार्यक्रम हैं। नामजप है, नाम–बेंक है, भक्ति के वहुत से रूप हैं जो पापमाफी की सान्त्वना देते हैं।

वे– पर हम लोग तो जैन हैं, हमारे लिये क्या है ?

मैं– आप लोगों में भी तो भक्ति का असीम साहित्य है। नामजप का माहात्म्य भी है।

वे– है, पर वह जैनधर्म के मूल सिद्धान्त से मेल नहीं खाता, वह तो हिन्दू धर्म की नकल है। दार्शनिक विवेचन करने पर वह टिकता नहीं है। तब झूठ मूठ का सन्तोष कैसे किया जाय ?

मैं– तो मैं आपको दार्शनिक आधार पर ऐसा विवेचन दे सकता हूं जिससे पाप का अन्तर्दंश विलकुल समाप्त होजाय, धर्मज्ञता के कारण जो आपको वेचैनी होती है वह विलकुल न रहे।

श्रीमान जी आश्चर्य से चौंक पड़े। बोले- अच्छा! यदि ऐसा होसके तो यह आपकी हमलोगों पर बड़ी दया होगी।

मैं- यह तो तत्त्वज्ञान की बात है, बुद्धि का व्यायाम है, इसमें कुछ भी खर्च नहीं है।

वे- तो बतलाइये! बुद्धि का व्यायाम हमें भी सिखलाइये!

मैं- जैनधर्म के अनुसार प्रत्येक द्रव्य अपने स्वभाव में स्थित है। उसके स्वभाव को कोई वदल नहीं सकता।

वे- यह तो विलकुल ठीक बात है।

मैं- इसका मतलव यह हुआ कि उसमें जो परिवर्तन होते हैं उनका मूल कर्तृत्व किसी दूसरे का नहीं, उसी पदार्थ का है। क्योंकि एक पदार्थ यदि दूसरे पदार्थ में परिणमन करने लगे तव तो पदार्थ का स्वभाव ही नष्ट होजाय, जो अशक्य है।

वे- विलकुल ठीक।

मैं- तब इसका अर्थ यह हुआ कि कार्य का मुख्य उत्तर-दायित्व निमित्त पर नहीं उपादान पर है। निमित्त तो सिर्फ उस मौके पर उपस्थित रहता है। उसका कर्तृत्व कुछ नहीं है। संसार में कोई किसी का कर्ता नहीं है। सव अपने अपने स्वभाव में स्थित हैं।

वे- बिलकुल ठीक कह रहे हैं आप।

मैं- अब आप सोचिये कि व्यापार में आपने किसी को ठग लिया तो उसके ठगे जाने की जो अवस्था है उसका

कर्तृत्व उसी में है, आप में नहीं। आप तो सिर्फ निमित्त हैं, जो उस समय उपस्थित हैं। उपस्थिति मात्र से कोई कर्ता थोड़े ही कहा जासकता है।

श्रीमान जी हर्ष से चिल्लाये- बहुत ठीक गुरुदेव, बहुत ठीक ! इस समय संसार में आपके समान जैनधर्म का मर्मज्ञ कोई नहीं है। निमित्त उपादान का जो नया मूल्यांकन आपने किया वह अभूतपूर्व है, बहुत ही फायदे का है। इससे हमारा अन्तर्दंश बिलकुल समाप्त होजायगा। अब हम सब कुछ करते हुए भी बहुत चैन से रह सकेंगे।

मैंने कहा- और भी एक तर्क है।

श्रीमान जी ने हर्ष से गद्गद होकर कहा- बतलाइये, वह भी बतलाइये !

मैंने कहा- पदार्थ की जो त्रैकालिक पर्यायें हैं वे निश्चित हैं कि नहीं ? जिनेन्द्र भगवान ने उन्हें जिस रूपमें देखा है उनका परिणमन उसी रूप में होगा कि नहीं ?

वे- जरूर होगा। उन्हें कौन बदल सकता है ?

मैं- तब आपने जिस आदमी को ठगा है क्या उसका ठगा जाना बदला जासकता था ?

वे- कैसे बदला जासकता था ! केवलज्ञान में जो झलका है वह तो होता ही। उसे बदलने की ताकत किसमें है ?

मैं- तब ठगे जानेवाले की ठगी आप भी नहीं बदलसकते थे। जिसे आप बदल नहीं सकते थे उसकी जिम्मेदारी आप पर क्या है ? आप तो सिर्फ नियति के औजार हैं। इसमें आपका कर्तृत्व क्या है। जिसमें आपका कर्तृत्व नहीं उसकी चिन्ता

आपको क्यों करना चाहिये ?

सेठ– नहीं करना चाहिये। अब हम नहीं करेंगे, कदापि नहीं करेंगे। आपने हमारी आंखें खोलदीं। बेचैनी के नरक में से निकाल दिया। भरपूर स्वतंत्रता देदी।

सेठजी के साथ एक जैन पंडित भी थे। मैंने उनसे कहा– कहिये पंडित जी, आपका क्या विचार है ?

पंडित जी– मैं भी आप के तर्कों का कायल हूं। आप सचमुच जैन सिद्धान्त के मर्मस्पर्शी ज्ञाता है। अब आप मुझे अपना वकील समझिये !

मैं– क्या सभी जैन पंडित आपकी बात मानेंगे ?

पंडितजी– सभी मानें चाहे न मानें। पर जब सेठ जी मानते हैं और मैं मानता हूं तब विरोधियों की बकझक का कोई मूल्य नहीं रहता है। धनवान तो मानेंगे ही। तब वह समाज की मान्यता बनजायगी।

सेठ जी ने भी पंडित जी की बहुत प्रशंसा की।

जाते समय वे संस्थान को पचास हजार रुपये की भेंट देगये। मैंने पंडित जी से कहा– आप लोग समय समय पर यहां आते रहें। दूसरे पंडितों को भी लाते रहें। सब के आने जाने का खर्च मैं दूंगा।

पंडित जी गद्गद होगये और मेरे परम भक्त बनगये। वकील तो बन ही गये थे।

उनको बिदा करने के बाद मायादास ने कहा– गुरुदेव, जैन शास्त्र का मर्म जिस प्रकार आपने बताया उससे मैं बहुत प्रभावित हुआ हूं।

मैंने कहा– क्या तुम भी मूर्ख बन रहे हो ?

मायादास– मूर्ख ! आपके असाधारण महान तर्कों को मानना क्या मूर्खता है ?

मैं– पर वे सब तर्काभास थे, झूठे तर्क थे। जैनसमाज को, खासकर जैन श्रीमानों को, गुमराह करके उनसे पैसा ठगने के लिये थे। आखिर पचास हजार रुपये ठग ही लिये।

मायादास– तो फिर असली तर्क क्या है ?

मैं– असली तर्क यह है कि कर्तृत्व निमित्त में होता है। मिट्टी का जब घड़ा बनता है तब उसका कर्तृत्व मिट्टी में नहीं कुम्हार में है। घड़े का छोटा, बड़ा, कच्चा, पक्का, अच्छा बुरा बनना कुम्हार के हाथ में है मिट्टी के हाथमें नहीं। अगर किसी दिन सेठ जी के यहां डांका पड़जाय, कोई उनके बच्चे की हत्या करजाय तब सेठ जी यह न कहेंगे कि डांके– वाले तो निमित्त मात्र थे उनमें कर्तृत्व नहीं था, उनकी तो सिर्फ उपस्थिति थी, जिम्मेदारी नहीं। सारी जिम्मेदारी मेरी है। लड़के की हत्या में कर्तृत्व हत्यारे का नहीं, मेरे लड़के का है। उस समय निमित्त उपादान की सारी चौकड़ी भूल– जायंगे। जगत में जितने विशेष या विषम परिवर्तन होते हैं सबका कर्तृत्व निमित्त में है, उपादान में नहीं। निमित्त के बिना जो उपादान में परिवर्तन होते हैं वे एक सरीखे होते हैं, उनमें विविधता नहीं आती। विविधता का कारण निमित्त ही है। जैन मान्यता के अनुसार जब आत्मा मुक्त होजाता है तब भी उसमें परिवर्तन होते रहते हैं पर वे परिवर्तन एक सरीखे होते हैं उनमें विषमता नहीं होती। संसारी जीव में जो

परिवर्तन होते हैं उनमें विविधता या विषमता रहती है, क्योंकि वहां जीव से भिन्न पुद्‌गल का कार्मण शरीर निमित्त होता है। यदि कार्मण शरीर निमित्त न बने तो परिणमन मुक्तात्माओं सरीखा सम ही होगा।

मायादास- हां ! सच्चा तर्क तो यही है। पर एक पदार्थ दूसरे पदार्थ के रूप में परिणमन नहीं करता, यह जो बात कही थी उसका क्या ?

मैं- वह बिलकुल ठीक है। निमित्त बनने से एक पदार्थ दूसरे में परिणमन नहीं करता। कुम्हार घड़ा बनाता है तब क्या कुम्हार घड़े के रूप में परिणमित होता है ! घड़ा तो मिट्टी ही बनती है परन्तु घड़ा बनाने में उसे जिस गति की जरूरत है वह कुम्हार ही देता है। कुम्हार के हाथ से मिट्टी को चोट पहुंचती है इसलिये वह इधर की उधर होती है। उसकी इसी गति से घड़ा बनता है। मैं किसी गाड़ी को धक्का दूं तो गाड़ी चल पड़ेगी पर इसके लिये मुझे गाड़ी न बनना पड़ेगा। किन्तु गाड़ी से अलग रहकर उसे धक्का देना पड़ेगा। निमित्त का यही काम है। वह उपादान नहीं बनता किन्तु यथायोग्य उसके निकट आकर उसे गति देता है। वह गति न दे तो कार्य भी न हो। इस प्रकार कार्यकारण समझने के लिये जिस अन्वय व्यतिरेक व्याप्ति की जरूरत है वह निमित्त में और कार्य में पूरी है। तर्क का मुख्य आधार यही अन्वय-व्यतिरेक व्याप्ति है। और इसीसे निमित्त में कर्तृत्व सिद्ध होता है। यदि निमित्त में कर्तृत्व न होता तो संसार के प्राणियों में जो विषमता है वह न होती। यह विषमता

इसीलिये तो है कि किसीने पहिले पुण्य किया है किसी ने पाप किया है। और पुण्य तभी कहलाता है जब कोई संसार को सुखी करता है और पाप तभी कहलाता है जब कोई संसार को दुखी करता है । अगर निमित्त में कर्तृत्व न होता तो संसार में कोई पुण्यात्मा और पापी भी न होता, तब प्राणियों में यह विषमता भी न होती। मनुष्य में जो अच्छी बुरी भावनाएं होती हैं वे भी निमित्त कारण के द्वारा होती हैं। चाहे वह निमित्त कारण कर्म पुद्गल हों चाहे दुनिया की अन्य घटनाएं ।

मायादास– अब बात बिलकुल साफ होगई । सचमुच आपने तर्काभास देकर उन्हें ललचाया था । पर आपने जो यह बात कही थी कि जो होनेवाला होता हैं वही होता है उसे कोई बदल नहीं सकता । ऐसी अवस्था में निमित्त क्या करेगा ?

मैं– इसमें शब्द छल है, दूसरे एक मिथ्या मान्यता भी है । होनेवाले का अर्थ यह कि जो भविष्य में होगा । जो भविष्य में होगा वह आज नहीं है । आज तो उसमें सिर्फ वर्तमान अवस्था है । भविष्य में क्या होगा वह भविष्य के निमित्तों पर निर्भर है । वह भविष्य वर्तमान का अंग नहीं है जिससे वर्तमान में निश्चित कहा जासके । जो होनेवाला है वह होकर ही रहेगा यह कहने की अपेक्षा यह कहना ठीक है कि जो होगा या होकर रहेगा उसी को आज हम होनेवाला कहते हैं। और जो होगा उसका रूप वर्तमान में कुछ नहीं है।

केवली ने देखने की बात घोर अन्धविश्वास है। ऐसा

कोई केवली नहीं होता जो त्रिकाल का प्रत्यक्षदर्शी हो। जो अवस्था अभी है ही नहीं उसका प्रत्यक्ष क्या होगा। जो लोग विश्वरचना की मामूली जानकारी भी नहीं रखते थे वे सर्वज्ञ थे यह कहना बुद्धि का दिवालियापन है।

मायादास– गुरुदेव, सचमुच आपका कहना बिलकुल सत्य है। उन लोगों को तो अपने सिद्धान्त की ये बातें मालूम ही थीं फिर वे लोग आपकी बात क्यों मानगये ? क्या वे इतने मूर्ख थे ?

मैं– मूर्ख नहीं बदमाश थे। चाहते थे कि हम पाप तो करते रहें पर पाप की जिम्मेदारी से बचते रहें। इसलिये अपने पापों पर पर्दा डालने के लिये उनने निमित्त की उदासीनता, सर्वज्ञ के देखे को भी बदल नहीं सकता आदि बातों को स्वीकार किया है। यों वे इतने मूर्ख नहीं हैं कि यह प्रगट सत्य न समझ सकते हों। पर वे समझकर भी नहीं समझना चाहते, आस्तिकता का ढोंग करके अपने पापों पर पर्दा डालना चाहते हैं। बाद में इन लोगों के प्रचार के कारण कुछ मूर्ख और अन्धविश्वासी लोग इनकी मान्यताओं से चिपक जाते हैं। इस प्रकार इन लोगों में समृद्ध लोग और उनसे लाभ उठाने वाले लोग शैतान हैं और कुछ भोले भाले लोग हैवान हैं। सो रहें, अपने को फायदा ही है। आज पचास हजार मिलगये इतना ही काफी नहीं है आगे और भी मिलेंगे। अपने को अपने लाभ से मतलब, भले ही ये जहन्नुम में जायें।

o–⁐⁐–o

३७– भूत की समाधि

संस्थान में लोगों के भूत उतारने का व्यवस्थित कार्य-क्रम होता है। मैं मानता हूं कि भूत प्रेत आदि की कोई योनियां नहीं होतीं और होतीं भी तो उनके प्राणी यहां किसी को न लगते। पर लोगों को इस विषय में जो अन्धविश्वास है उसे सहज ही हटाया नहीं जासकता। क्योंकि पुराने धर्मों ने इस अन्धविश्वास को उत्तेजित करनेवाली भरपूर सामग्री दी है। जिसके संस्कार बाल्यावस्था से मनुष्य पर डाले जाते हैं। इस प्रकार उनमें यह मूढ़ता अमिट सरीखी है। ऐसी हालत में कोई न कोई उन्हें ठगेगा ही, तब मैं ही क्यों न उनको ठगूं।

फिर यह ठगने का भी सवाल नहीं है, यह मनोवैज्ञा-निक चिकित्सा भी है। जब लोगों को भूत लगने का पक्का विश्वास है तव उनका इलाज तभी सम्भव है जब उन्हें किसी न किसी क्रिया से भूत उतरने का विश्वास करा दिया जाय। यह कह देने से उनका इलाज नहीं होसकता कि भूत वगैरह कुछ नहीं होता। ऐसी हालत में संस्थान में भूत उतारने का धंधा भी चालू कर देना उचित ही था।

आज एक गृहस्थ आये थे। उनके साथ में उनकी पुत्र-वधू थी। उसे भूत आया करता था। उससे उनका कुटुम्ब परेशान था। मुझे उसका भूत उतारना था। इसके लिये एक बड़ा कमरा नियत कर रक्खा है। उसी में भूत उतारने का प्रयोग किया।

कमरे में मैं और मेरे दो शिष्य, वे गृहस्थ और उनकी पुत्रवधू इस प्रकार पांच व्यक्ति बैठे। भूत उतारने की सब सामग्री भी वहां रक्खी। वहां एक तरफ ऐसा इन्तजाम किया गया था जिसमें टार्च की तरह लाल प्रकाश निकल रहा था। पुत्रवधू को उसी तरफ नजर रखकर बिठला दिया गया। और मैं अपने शिष्यों से इस प्रकार फुसफुसाहट में बात करने लगा मानों भूत आनेवाला है। हमारी फुसफुसाहट वह पुत्रवधू सुन रही थी। उस पर यह असर पड़ रहा था कि भूत कमरे में आगया है। इस मनोवैज्ञानिक प्रभाव का फल यह हुआ कि उस पर भूतावेश होगया। और अब वह पुत्रवधू इस तरह बात करने लगी मानों भूत बोल रहा है। भूत ने इस शरीर में आने का कारण बताया। दूसरे शरीर में जाने से इनकार कर दिया। तब मैंने एक शीशी में जो तीव्र गंधवाला रस भर रखा था वह उसकी नाक में उड़ेला। उसे इतनी बेचैनी हुई कि उसके मुंह से निकल पड़ा कि मैं जाता हूं। उसी समय मैंने अपने शिष्यों को हुक्म दिया कि भूत को बोतल में कैद करदो। हां! ठीक है। अब बोतल का मुंह बन्द करदो! उस पर मन्त्र की मुहर मार दो! और इसे सात हाथ नीचे जमीन में गाड़ दो! यह अब सात सौ वर्ष तक नहीं निकल सकेगा।

ये सब बातें मैं अपने शिष्यों से जोर जोर से कह रहा था। जिसका असर उस पुत्रवधू पर भी पड़ रहा था। उसे विश्वास होगया कि भूत अब सात सौ वर्ष तक नहीं आसकता। इस प्रकार भूत उतर गया।

भूत उतारने के लिये मुझे अनेक तरह के प्रयोग करना पड़ते हैं। एक वार रासायनिक प्रयोग से मैंने भूत को जला दिया था और उसका धुवां भूतावेशवाले व्यक्ति को दिखा दिया था। एक वार ऐसे ही प्रयोगों से भूत का खून कर दिया था। इस प्रकार अनेक तरह की क्रियाएं करता हूं जिससे भूत उत-रने का भान भूतावेश वाले को होजाता है। इस कार्य में भी अच्छी अच्छी भेंटें मिलती हैं।

कभी कभी भूतावेशवाले व्यक्ति वड़े ढोंगी होते हैं। वे विलकुल जानबूझकर भूतावेश का ढोंग करते हैं। और उसका कारण यह होता है कि वेटा वाप से नाराज है, वहू सास से नाराज है इसलिये वह भूतावेश का ढोंग करके वापका या सास का अपमान कर लेता है। ऐसे अवसरों पर मैं वहुत चतुराई से काम लेता हूं। अकेले में घुमा फिराकर चर्चा करके मैं उसका रहस्य जान लेता हूं। फिर पिता को या सास को इस ढंग से समझाता हूं कि उनका व्यवहार वदल जाता है। और पुत्र या वहू की नाराजी दूर होजाती है। इस प्रकार उनका भूत उतर जाता है। मुझे अच्छी भेंटें भी मिलजाती हैं। मैं वड़े उपकारी रूप में प्रशंसित भी होजाता हूं। मेरी गिनती वड़े सिद्ध पुरुप के रूप में होजाती है। इस कार्य में भी मैं पूरी तरह सफल हूं।

३८—परलोक विद्या

इधर कुछ वर्षों से पश्चिमी देशों में परलोक विद्या के प्रयोग विख्यात होरहे हैं। इस विषय की वहुत सी जानकारी मैंने भी की है। और इस विषय को आमदनी का साधन वनालिया है। इसमें प्लान्चेट के द्वारा परलोक की आत्माओं

से बातचीत की जाती है । वह मामूली हाथ की सफाई का प्रयोग है ।

एक कागज के मोटे गत्ते पर सब वर्णमाला के अक्षर लिखे रहते हैं । और नीचे 'हां' और 'नहीं' लिखा रहता है । प्लान्चेट अपने पहियों पर बिलकुल हलके इशारे से घूम जाती है । और उसकी एक नोक पर पेन्सिल सरीखी एक लकड़ी लगी रहती है । वह लकड़ी जिन जिन अक्षरों पर ठहरती जाती है उनको ध्यानमे रखते चलो । इस प्रकार मृता-त्माओं के सन्देश मिलजाते हैं ।

एक ऐसी गोल टेबुल ली जाती है जो एक खंभे पर खड़ी हो और उस एक खंभे के नीचे तीन पैर हों । ऐसी टेबुल पर यदि एक तरफ से दबाव डाला जाय तो दूसरी तरफ का एक पैर उठेगा । उस टेबुल के दो तरफ दो आदमी बैठ जाते हैं । दोनों हाथ की हथेली जमा लेते हैं और इस तरह मन में विचार कर बैठ जाते हैं मानों मृतात्माओं की बाट देख रहे हो । थोड़ी देर मे ऐसा मालूम होता है कि आप से आप टेबुल का एक पैर उठता है और गिरता है । और उस समय प्रयोगकर्ता पूछता है कि यदि मृतात्मा आगई है तो दो बार पैर उठाकर गिराओ ! और दो बार पैर उठकर गिराता है । वह मालूम ऐसा होता है मानों आपसे आप अर्थात् मृतात्मा के प्रयत्न से पैर उठा है । जब कि वास्तव में प्रयोगकर्ता की जो हथेलियां टेबुल पर जमी होतीं हैं उनके दबाव से उठता है । इस प्रकार दर्शकों पर यह असर पड़ता है कि टेबुल का पैर मृतात्माने उठाया है ।

इसकेबाद प्रयोगकर्ता अपनी उंगलियां प्लान्चेट पर जमा लेता है। उसका साथी भी जमा लेता है। और प्लान्चेट अक्षर लिखे हुए बोर्ड पर घूमने लगती है। प्रयोगकर्ता कहता है कि यह प्लान्चेट मृतात्मा घुमा रहा है। उसके हाथ प्लान्चेट पर जमें हैं इसलिये घूम रहे हैं। जब कि वास्तविकता यह है कि प्रयोगकर्ता ही अपने हाथ से प्लान्चेट घुमाता है। और वह उसकी पेन्सिल एक एक अक्षर पर रुकाता चलता है। इस प्रकार शब्द और वाक्य बन जाते हैं।

उस दिन एक तरुण आया। बोला- हमें अपने बाबा मोहनदास जी से बात करना है। मैंने मोहनदास जी के विषय में सब बातें पूछलीं। उनकी उम्र क्या थी। मरते समय उनके घर में कौन कौन आदमी थे। किससे उनका कैसा प्यार था। वे धंधा क्या करते थे। कितने पढ़े लिखे थे। किस-प्रकार का स्वभाव था आदि। फिर मैंने कहा- परलोक में उन्हें ढुढ़वाना पड़ेगा। इसकेलिये मैं किसी मृतात्मा से कहूंगा। वह अगले हफ्ते तक ढूंढ़कर लायगी। तुम हर दिन आते रहो। जिस दिन तुम्हारे बाबा ढूंढकर लाये जासकेंगे उस दिन बातचीत होजायगी।

वह हर दिन आता रहा। इस बीच मैंने उसके बाबा के विषय में और बहुतसी जानकारी प्राप्त करली। इसप्रकार मैं इतना तैयार होगया कि उसके बाबा से कोई प्रश्न पूछा जाय तो उसकी तरफ से मैं ऐसा उत्तर देसकूं जिससे घर-वाले को सन्तोष होजाय। तब एक दिन मैंने कहा- तुम्हारे बाबा की मृतात्मा आई है। वह उत्सुकता से टेबुल के नजदीक

बैठ गया । मैंने प्लान्चेट की तरफ नजर रखकर कहा– अपना नाम लिखो । तब प्लान्चेट की पेन्सिल पहिले म पर, फिर ओ पर, फिर ह पर, फिर न पर, फिर द पर, फिर आ की मात्रा पर, फिर स पर रुकी । इसप्रकार मैंने मोहनदास पढ़ लिया । फिर मैंने पूछा– क्या आप मोहनदास हैं ? प्लान्चेट की पेन्सिल 'हां' पर रुकी । इसी प्रकार मैंने सब प्रश्नों के उत्तर मोह–नदास जी के द्वारा दिलवाये । मोहनदास का नाती बहुत खुश हुआ । उसे यह लगा कि सचमुच उसने अपने बाबा से भेंट की है और उनसे बातचीत की हैं। वह बीस रुपया भेंट चढ़ा–कर चला गया ।

जब मैं देखता कि कोई ऐसा प्रश्न आगया है कि मैं जिसका उत्तर नहीं देसकता । तब मैं प्लान्चेट की पेन्सिल 'नहीं' पर रोक देता । और पूछता कि क्या आपके जाने का समय होगया ? प्लान्चेट 'हां' पर रुक जाती । मैं पूछता– क्या आप जारहे हैं ? तो प्लान्चेट फिर 'हां' पर रुक–जाती । तब मैं कहता मृतात्मा चली गई । अब वह उत्तर नहीं देना चाहती । इस प्रकार मेरी चाल पकड़ में नहीं आती ।

लेकिन एक दिन एक दुर्घटना हो ही गई । एक जैन विद्वान आये । कुछ दिन प्रयोग देखने पर ऐसा मालूम हुआ कि उन्हें मेरे प्रयोगों पर विश्वास होगया है । एक दिन उनने कहा मुझे स्वर्गीय पं. गोपालदास जी की आत्मा से बात करना हैं । मैंने कहा– सात दिन में किसी मृतात्मा से ढुंढवाकर बुलवा दूंगा । वे हर दिन आते रहे । मैंने पं. गोपालदास जी के बारे में जानकारी चाही । उनसे साधारण जानकारी मिली ।

मैं सोचता था इसी जानकारी के आधार से उनके प्रश्नों का उत्तर दे दूंगा।

सातवें दिन एक मृतात्मा ने बताया। पं. गोपालदास जी बड़ी मुश्किल से मिले। वे आ नहीं रहे थे पर मैं किसी तरह उन्हें बहुत थोड़े समय के लिये लाया हूं। वे इसी कमरे में हैं। प्लान्चेट पर बात करेंगे।

यह भूमिका मैंने इसलिये जमाई थी कि मुझे सन्देह था कि एक जैन विद्वान के द्वारा किये गये प्रश्नों के ठीक उत्तर शायद मैं न दे पाऊं। और ऐसा ही हुआ। उस विद्‌वान ने पं. गोपालदास जी से जो प्रश्न किया वह जैन शास्त्र गोम्म-टसार की किसी उलझन का था। मैं उस विषय में कुछ भी नहीं जानता था। इसलिये मैंने प्लान्चेट की पेन्सिल 'नहीं' पर रोक दी। बारबार घूम फिर कर पेन्सिल 'नहीं' पर रुकने लगी। उसने पूछा- क्या आप उत्तर नहीं देना चाहते ? प्लान्चेट फिर नहीं पर 'रुकी'। फिर आप आये क्यों ? फिर प्लान्चेट नहीं पर। इस प्रकार उस दिन का प्रयोग असफल हुआ।

कुछ दिन बाद मैंने देखा कि उस जैन पंडित ने मेरे विरोध में एक लेख लिखा है कि मृतात्मा के प्रयोग छल हैं। टेबुल का जो एक पैर उठता है वह मेरी ही हथेली के दबाव से। दबाव डालते समय हाथ स्थिर तो रहता है पर उसकी नसें खिचती दिखाई देती हैं। प्लान्चेट अपने आप नहीं, मृतात्मा की प्रेरणा से नहीं, किन्तु मेरे हाथों की हरकत से चलती है, आदि।

यह गनीमत थी कि वह लेख एक जैन पत्र में छपा था इसलिये सार्वजनिक क्षेत्र में उनका कोई असर नहीं हुआ। फिर भी चित्त खिन्न हुआ। इतने वर्षों से मैं ठगी के नाना धंधे चलाता हूं पर कभी लोगों की नजर में मेरी ठगी नहीं आई। यह पहिला मौका है। खैर, धंधा तो चलेगा क्योंकि वह लेख मुट्ठीभर आदमियों ने पढ़ा होगा जब कि इस देश में अन्ध-श्रद्धालु करोड़ों हैं। कोई न कोई फसता रहेगा। ठगी का धंधा तो चलेगा फिर भी आज चित्त जरा खिन्न रहा।

३९— अन्तर्यामी

ऐसा मालूम होता है कि मेरे बारह बज चुके हैं। मेरा सूर्य अस्ताचल की ओर ढलने लगा है। इसलिये असफलताके समाचार आने लगे हैं। परलोक विद्या के रहस्योद्‌घाटन के बाद अन्तर्यामी की पोल भी खुलगई। कुछ वर्ष पहिले मैंने अपने एक प्रौढ़ शिष्य को अन्तर्यामी त्रिकालदर्शी बनाकर भ्रमण के लिये— खाने कमाने पुजने के लिये— भेजा था। वह किसी नगर में जाता था और वहां इस रूप में अपनी प्रसिद्धि कराता था कि हम किसी भी मनुष्य के मन की बात जानकर उसका उत्तर दे देंगे। इसकी फीस बीस रुपया रक्खी थी। हरदिन आठ दस शिकार फंस जाते थे। इसप्रकार डेढ सौ दो सौ रुपया रोज की कमाई होजाती थी। इसमें कुछ दलालों को कमीशन चला जाता था, बाकी बहुत सा वच जाता था।

दलाल लोग नगर में से श्रीमानों को फांसकर लाते थे। उनके आने के पहिले ही टेलीफोन से दलाल लोग उसके बारे

में अधिक से अधिक जानकारी दे देते थे । और अन्तर्यामी उनके विषय में बहुत सी बातें बिना पूछे ही बता देता था। इस प्रकार अन्तर्यामी की सर्वज्ञता का रौब छाजाता था । फिर भी यह समस्या तो रह ही जाती थी कि आनेवाला न जाने क्या प्रश्न पूछने वाला है। इसकेलिये मैंने उसे एक तरीका सिखा दिया था ।

एक स्लेट पट्टी के ऊपर एक बहुत जीर्ण कागज रक्खा जाता था उसके ऊपर एक बहुत पतला सफेद कागज रक्खा जाता था । और आगन्तुक को एक नुकीली पेन्सिल दी जाती थी । उस पेन्सिल से उस सफेद कागज पर आगन्तुक अपने मनका प्रश्न लिखता था । उससे कहा जाता था कि प्रश्न इस तरह लिखो कि लिखावट कोई दूसरा देख न पाये। फिर वह कागज अपनी जेब में रखकर दस मिनिट को बाहर चले जाओ । बुलाने पर तुम्हारा प्रश्न और उत्तर तुम्हें बता-दिया जायगा ।

प्रक्रिया यह थी कि जब आगन्तुक पतले कागज पर नुकीली पेन्सिल से लिखता था तब नीचे के जीर्ण कागज पर उन अक्षरों के निशान बन जाते थे । जिन्हें मोटे कांच द्वारा बढ़ाकर पढ़ा जासकता था । उससे देखकर प्रश्न पढ़ लिया जाता था और उत्तर भी दे दिया जाता था। जब प्रश्न और उत्तर दे दिया जाता तब आगन्तुक इसी बात से चकित होजाता था कि मेरे मन का प्रश्न इनने कैसे जान लिया। इस प्रकार अन्तर्यामी की अलौकिकता की छाप उसके मनपर लगजाती थी। ऐसी अवस्था में जो भी उत्तर दिया जाता

उसपर विश्वास होजाता था। इस चमत्कार का वैज्ञानिक कारण भी लोगों में प्रचारित कर दिया जाता था कि महा-राज परम योगी हैं। जब किसी के मन में कोई विचार आता है और वह विचार जब वह कागज पर लिखने बैठता है तब एक प्रकार की सूक्ष्म विचार तरंगें चारों तरफ फैलती हैं और उनका दिव्यदर्शन योगी जी कर लेते हैं। इसी योग के बलपर उसने अपने को भगवान कहलाना शुरु कर दिया था। इस प्रकार यह धंधा अच्छी तरह चल रहा था। चल तो अव भी रहा है और आगे भी चलेगा क्योंकि इस देश में अन्धश्रद्धालु मूढ़ इतने अधिक हैं और उनकी मूढ़ता तथा अन्धश्रद्धा इतनी मजबूत है कि कितनी भी पोल खुलजाय उनकी अन्धश्रद्धा नष्ट नहीं होती। फिर भी इस वात का दर्द है ही कि इस ठगी का भंडाफोड़ होगया।

एक दिन एक दलाल ने कहा कि इस नगर में एक ऐसे विद्वान रहते हैं जो अच्छे लेखक तथा पत्र सम्पादक हैं। उन्हें यदि अन्तर्यामी के चमत्कार से प्रभावित कर दिया जाय तो वे अपने पत्र में इस विषय में अच्छा लेख लिख देंगे। उनका लेख पढ़कर सैकड़ों लोग आयेंगे। और हजारों रुपयों की आमदनी होने लगेगी। वे फीस न देंगे पर उनके प्रचार से सैकड़ों से फीस मिलने लगेगी। अन्तर्यामी को आत्म विश्वास था इसलिये उसने उन विद्वान को लाने की मंजूरी देदी।

पर कई वार प्रयत्न करने पर भी वे विद्वान आये नहीं। अच्छा होता वे न आते। पर दुर्भाग्य जब आता है तब उसके पहिले मनुष्य की अक्ल मारी जाती है। सो अन्तर्यामी की

भी अक्ल मारी गई । और उन विद्वान को बड़े अनुरोध से बुलाया गया । और उनने सारी पोल खोलदी । जब उनको पतले कागज पर मनका प्रश्न लिखने को कहा गया तब उनके ध्यान में यह बात आगई कि जो इस कागज पर लिखा जायगा वह नीचे के कागज पर उमटेगा । इसलिये उनने इतने धीरे से लिखा जो नीचे के कागज पर साफ नहीं उमट पाया । फिर लिखावट भी ऐसी बनाई जो पढ़ी न जाय । फिर प्रश्न भी एक शास्त्रीय लिखा जिसको समझने की शक्ति अन्तर्यामी में थी नहीं । फल यह हुआ कि आधा घंटा कोशिश करने पर भी न प्रश्न बताया जासका न उसका उत्तर । तब वह विद्वान अकस्मात् कमरे में घुस आया । उसने वह कांच देख लिया जिससे कोई भी चीज कई गुणे बड़े आकार में दिखाई देती है । एक तो कांच के देखने से ही पोल खुलगई । फिर न प्रश्न पढ़ा गया न उत्तर दिया जासका । इस प्रकार सब भंडाफोड़ होगया । बाद में उस विद्वान ने अन्तर्यामी के षड्यंत्र का भंडाफोड़ करनेवाला लेख लिख दिया । उससे बहुत नुकसान हुआ । बहुत से शिकार चौकन्ने होगये । अन्त में वह शहर छोड़ देना पड़ा ।

ठगी का धंधा अब भी चलता है । पर वह बात नहीं है । खुद अन्तर्यामी की हिम्मत भी टूट गई है । यह देश महामूढ़ों और घोर अन्धविश्वासियों का देश न होता तो धंधा बन्द ही करना पड़ता और ठगी के अपराध में अन्तर्यामी को जेल जाना पड़ता । पर इस देश में धर्मांध मूढ़ भरे पड़े हैं इसलिये शिकार मिलते ही रहते हैं । भले ही कुछ कम मिलें । पर गुजर अच्छी तरह से होती है । फिर भी इस भंडाफोड़ से मेरा चित्त बड़ा खिन्न है ।

४०– आसमानी भगवान

मेरा सूर्य अब ढलने ही नहीं लगा है पर ऐसा मालूम होता है कि काफी जोर से ढल रहा है। आज भी इसी ढंग का बड़ा निराशाजनक समाचार मिला है। गत वर्ष एक राजस्थानी महिला दर्शन के लिये आई थी। उसकी इच्छा भी पुजने और प्रतिष्ठित होने की बहुत तीव्र थी। थोड़ी भी हिम्मत से कोई काम ले तो भद्दे से भद्दे ढोंग से वह प्रतिष्ठित होसकता है, पुज सकता है। इसलिये मैंने उसे भी एक योजना बतादी।

वह महिला जैन थी। जैन धर्म अपने जमाने का सुधारक धर्म था। इसने कई तरह की मूढताओं का त्याग कराया था। पर आज का जैन समाज मूढ़ता में किसी भी समाज से कम नहीं है। इसलिये जो योजना मैंने बताई वह यद्यपि बहुत भद्दी और उथली थी फिर भी उस महिलाने कहा कि वह इसे सफल करके बतायगी। उसकी हिम्मत देखकर मुझे जरा आश्चर्य तो हुआ, क्योंकि जैन समाज इतना मूढ़ है यह बात जरा कम ही जचती थी, पर जब उस महिला ने दृढ़ता से उस योजना को अमल में लाने की बात कही तब मुझे प्रसन्नता हुई।

योजना के अनुसार एक छोटीसी जिनमूर्ति उसे अपने मारवाडी घांघरे में छिपाना थी और घोषणा करना थी कि भगवान आसमान से पधारेंगे और पूजा होने के बाद आसमान में ही चले जायंगे। इसके बाद जो लोग आयंगे उनसे

कहना था कि आप लोग मुंह फेरकर बैठ जाइये। ज्यों ही सब लोग मुंह फेरकर बैठें कि वह बाई अपने घांघरे में छिपी हुई मूर्ति निकालकर चौकी पर रखदे और जय जयकार करने लगे। जिससे लोग समझ जायं कि आसमान से भगवान आगये। इसके बाद घंटों भजन गीत पूजा आदि के कार्यक्रम हों। इसके बाद भगवान के विदा होने का समय आजाने पर सब लोग फिर मुंह फेरलें तब वह बाई उस जिनमूर्ति को फिर घांघरे में छिपाले।

मुझे आशा तो नहीं थी कि यह भद्दी और मूर्खतापूर्ण योजना सफल होगी। जैन समाज साधारण हिन्दू समाज से भी अधिक मूढ़ है इसकी आशा मैं नहीं कर पाता था। पर उस बाई को आशा थी। और इसमें वह सफल होगई। और बाद में तो नियत दिन पर दूर दूर से जैन लोग टोलियों मे आने लगे। बसें भर भर कर आने लगीं। वहां मेला लगने लगा। गांव की भी प्रतिष्ठा बढ़ गई। जब मुझे इस सफलता के समाचार मिले तब मैं मन ही मन मुसकराकर कहने लगा कि वाहरे जैन समाज ! दुनिया भर के गधे तेरे में भी अवतार लेकर आगये हैं।

पर आज मेरी यह मुसकराहट खतम होगई। मेवाड़ का ही एक जैन कुछ लोगों के साथ उस मेले में आया। आसमानी भगवान के अवतरण के समय तो उसने मुंह फेर लिया पर विदाई के समय वह अड़गया कि मुंह नहीं फेरेंगे। बोला– जब हमने भगवान की पूजा की है तो उन्हें हमसे छिपकर जाने की क्या जरूरत है। वे हमारे देखते देखते

आसमान में क्यों नहीं जाते। कुछ अन्धभक्तों ने उसका विरोध किया, उसके कुटुम्बियों ने भी विरोध किया। पर बहुत से लोग उस सत्यानुरागी जैन का साथ देने लगे। अन्त में भगवान आसमान में जाते हुए नहीं दिखाये जासके। सारे रहस्य का भंडाफोड़ होगया। और बुरी तरहसे वह खेल खत्म होगया।

४१– भूसमाधि

आज भी बड़ा दुःखद समाचार आया। बहुत दिनों से भूसमाधि के प्रयोग करके धन प्रतिष्ठा आदि की प्राप्ति हो रही थी। जमीन में बड़ा गड्ढा खोदकर उसमें एक आदमी कुछ दिनों तक रहता है और जीवित निकल आता है। इस खेल को लोग योग का चमत्कार, ईश्वर की विशेष कृपा, धर्म–साधनाका परिणाम, या ऋद्धि सिद्धि का प्रताप आदि समझते हैं। जब कि भूसमाधि में यह सब कुछ नहीं है। यह सब लोगों की आंखों में धूल झोंकना है। पर मेरे कुछ शिष्य यह खेल बहुत समय से करते आये हैं। और कहीं कोई अस–फलता नहीं हुई। क्योंकि मैंने जो तरकीबें बतलाई हैं उनमें से एक का भी पालन होजाय तो भूसमाधि में किसी के प्राण नहीं जासकते।

मैं भूसमाधि के लिये गड्ढा इतना बड़ा बनवाता हूं कि नियतसमय तक उसे प्राणवायु मिलती रहे।

समाधि के गड्ढे में एक छोटी सी सुरंग छुपी हुई बनवा–देता हूं। जिसमें से हवा पानी भोजन उसे पहुंचता रहता है।

समाधि के गड्ढे के ऊपर जगह जगह झंडे गड़वाता हूं। झंडों के बांस गांठों के भीतर इस पार से उस पार तक खुले

रहते हैं जिससे हवा पानी दूध आदि उसमें से समाधि के गड्ढे में पहुंचता रहता है ।

और भी अवसर देखकर अनेक उपाय करता हूं । जिससे समाधि लेने वाले को हवा पानी और खुराक मिलती रहे ।

यह समाधि सात दिन की थी । पर न मालूम किसकी बदमाशी से यह मौत होगई । सातवें दिन समाधि खुलने-वाली थी । हजारों आदमी, दर्जनों पत्रकार तथा कुछ अफसर आदि वहां पहुंचे थे । पर जब समाधि खोली गई तब सड़ी-हुई लाश मिली । उसकी वड़ी वुरी मौत हुई थी । हवा न मिलने से उसे वहुत तड़पना पड़ा था । वह वहुत छटपटाया था टेवुल के ऊपर खड़ा होकर उसने समाधि के ढक्कन को खूब धक्के दिये थे । पर किसी ने सुना नहीं था । सब बदमाश गाने वजाने में लीन रहे थे । और वह वुरी मौत मरगया था । मुझे इसका वहुत दर्द है । मैं एक एक वदमाश को सजा दूंगा । इससे वहुत निन्दा हुई । मेरे संस्थान की वहुत वदनामी हुई । सचमुच मेरी प्रतिष्ठा का सूर्य अब अस्ताचल की ओर ढल रहा है । अव मैं वहुत तीव्रता और उग्रता से काम करूंगा ।

४२- गोरे चेले

यद्यपि देश स्वतंत्र होगया है फिर भी गोरों का अर्थात् योरुप अमेरिका के लोगों का गौरव यहां वहुत है । ये लोग अगर चेले वन जायं तो भारतीयों की नजर में मेरा और मेरे संस्थान का गौरव वढ़जाता है । भूसमाधि में हुई मौत के वाद मैंने इस तरफ विशेष ध्यान दिया और इसमें खूब सफ-लता पाई है ।

अमेरिका में बहुत से युवक वहां के संघर्षमय अशान्त जीवन से ऊबे हुए हैं। ऐसे युवक और युवतियों को मैंने शान्ति के लिये चेला बनाया है। उन्हें ध्यान के प्रयोग कराता हूं। ब्रह्मविहार का अवसर भी देता हूं। और नशे में मस्त करने के लिये गांजा की दम लगवाता हूं। अब इनसे एक लाभ और हुआ है। गांजे आदि का अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार भी करवाता हूं। इससे आर्थिक लाभ तो है ही, साथ ही विदेशों में भी मेरे चेले बढ़ते जाते हैं। वे गांजे की दम लगाते हैं, खूब ध्यान करते हैं। सड़क पर राम कृष्ण हरि के नाम का कीर्तन करते हुए निकलते हैं। इससे हिन्दू समाज में मेरे धर्मात्मापन की ख्याति और बढ़गई है। इसप्रकार धर्म-प्रचार, चेलों की वृद्धि, गांजा आदि की बिक्री से मुनाफा, सब तरफ लाभ ही लाभ है। धन धर्म प्रतिष्ठा सब की वृद्धि होरही है।

इसके सिवाय मैंने एक काम और किया है। विदेशी राजदूतों के मारफत उनकी सरकारों से सम्बन्ध स्थापित किया है। वे चाहते थे कि मेरा संस्थान जासूसी हलचलों का केन्द्र बनजाय। मैंने इसकी अनुमति दे दी। इतना ही नहीं, भरपूर सहयोग भी दिया। मैंने यहां एक विशाल मन्दिर बनवाया। उसके नीचे तलघर में ट्रांसफारमर आदि की व्यवस्था की। वहां जासूसों के रहने आदि की व्यवस्था की। वे वहां अपना काम करते हैं पर किसी को दिखाई नहीं देते। गुप्त समाचार मेरे आदमी उन्हें देते हैं। उनके हर षड्यन्त्र में सहायता करते हैं। इससे विदेशी सरकारों से मुझे लाखों रुपये मिलते

हैं। मेरे मन्दिर की ख्याति भी खूब वढ़गई है। मेरे धर्मात्मापन की छाप भी जनता के दिलों पर खूब लगगई है। इसलिये सरकार का ध्यान भी मेरे गुप्त कार्यों पर नहीं जाता। इन सफलताओं ने मेरे पिछले भंडाफोड़ों का दर्द भुलादिया है।

४३– आनन्द पंथ

मेरा संस्थान जिस प्रकार वढ़गया था, जिस प्रकार उनके नाना अंग वन गये थे, विदेशी राजनीति भी उसमें जिसप्रकार घुस गई थी, और जिस प्रकार पिछले दिनों भंडाफोड़ होगये थे। उससे मैंने इसे एक व्यापक मिशन का नाम देकर इसे व्यवस्थित करने का विचार किया। और इसका नाम आनन्द पंथ रक्खा। अब सब क्रियाएं इस नये सम्प्रदाय के नाम पर होंगीं। यों तो मेरा संस्थान धार्मिकता से ही शुरु हुआ था और आज भी इसपर धार्मिकता की छाप लगी हुई है पर अब इस नये नाम से यह एक व्यवस्थित धर्म वनजायगा। पर मुझे शक्ति और सतर्कता से काम लेना पड़ेगा।

जगह जगह ठगी की जो दूकानें चलती है वे चलती रहें। पर अब जगह जगह स्कूल दवाखाना आदि भी खुलवाये हैं जिससे यह एक लोकसेवी संस्था के नाम से विख्यात होजाये। जगह जगह साधना केन्द्र खुलवाये हैं जहां लोग इकट्ठे होकर साधना करते हैं। कुछ पत्र भी निकलवाये हैं। राजनीति में भी कुछ प्रवेश कराया है। आनन्द सभी चाहते हैं इसलिये आनन्द पंथ यह नाम भी आकर्षक है। परन्तु

जिस प्रकार काम फैल गया है और जिस प्रकार रहस्यों से कार्यक्रम भरे हुए हैं उसे देखते हुए मुझे आत्मरक्षा के लिये, तथा विश्वासघातियों को दंड देने के लिये काफी इन्तजाम करना पड़ा है। अब मेरे द्वार पर कठोर पहरा रहता है। शस्त्रों से सज्ज पहरेदार द्वार पर घूमते रहते हैं। और विश्वास-घातियों को मैंने ठिकाने लगा दिया है। उनकी लाशें तल-घर में फिकवा दी हैं। वहां अब उनके नरकंकाल रह गये हैं।

४४- सत्यस्नेही से चर्चा

आज एक पहरेदार ने बताया कि कोई सत्यस्नेही मुझसे मिलना चाहते हैं। यों आजकल मैं किसी से मिलता नहीं हूं। अपने अत्यन्त विश्वसनीय व्यक्तियों से ही मिलता हूं। पर मालूम हुआ कि ये सत्यसमाज के प्रमुख व्यक्तियों में से हैं। सत्यसमाजसे मैं खूब परिचित हूं, बल्कि भीतर से सत्यसमाज़ी हूं। एक सत्यसमाजी ने जब मेरे आसमानी भगवान के नाम से प्रचलित कार्यक्रम का भडाफोड़ किया था तब से सत्यसमाज की तरफ मैं और भी आकर्षित हुआ। एक तरह से उनका काम दुश्मनी का ही था, फिर भी मेरे साथ दुश्मनी करने के लिये उनने यह कार्य न किया था। उन्हें तो यह पता भी नहीं था कि इस योजना में मेरा हाथ है। तब से सत्यसमाज और सत्यसमाजियों के बारे में कुछ उत्सुकता थी। इसलिये मैंने उनकी हुलिया का पता लगाकर, और यह जानकर कि उनसे किसी प्रकार का भय नहीं है, मैंने आने दिया। फिर भी सतर्कता की दृष्टि से मैंने सशस्त्र पहि-रेदार को चौकन्ना रहने के लिये कह दिया।

वे बिलकुल निहत्थे और शान्त थे। मैंने पूछा किस-लिये आये हो ?

वे बोले- आपके फैले हुए कारवार के वारे में बहुत दिनों से जानकारी लेता रहा हूं। कुछ शिकायतें भी सुनी हैं। इसलिये एक हितैषी जिज्ञासु की दृष्टि से आपको समझने के लिये चला आया।

मैं- कुछ उलहना देना है ?

वे- नहीं ! आपका भीतरी परिचय प्राप्त कर कुछ हित की बातें कहूंगा। जचजायंगी तो मुझे प्रसन्नता होगी, न जचेंगीं तो बुरा न मानूंगा, न कोई ऐसी बात कहूंगा जिससे आपको दुःख हो।

मैं- कहिये क्या कहना चाहते हैं ?

वे- इस समय आप कितने शान्त सुखी और सन्तुष्ट हैं ?

मैं- जैसा कारबार बढ़गया है उससे चिन्ताएं भी बढ़ी हैं, ऐसे में सुख शान्ति का तो सवाल ही क्या है। और गतिशील व्यक्ति सन्तुष्ट तो हो ही नहीं सकता।

वे- कारबार बढ़ने से जो चिन्ता बढ़ती है वह मनुष्य को इतना दुखी नहीं करती, परन्तु कार्यों के गोपनीय होने से जो चिन्ता और आशंका बढ़ती है वह बहुत दुखी करती है। रात में नींद भी नहीं आने देती। एक तरह का भय बना रहता है। पहिले प्रकार की चिन्ता तो चिन्तन में जल्दी परिणत होजाती है। पर दूसरी चिन्ता चिन्तन में नहीं भय और बेचैनी में परिणत होती है। मैं इसी चिन्ता की बात पूछ रहा हूं।

ख्याति लाभ के ही लिये कष्ट सहें जो लोग ।
उन छलियों के ढोंग से करो नहीं सहयोग ॥ १४६ ॥
धूर्त लोग गुरुवेष में बने रंक से राव ।
वे संसार समुद्र में हैं पत्थर की नाव ॥ १५३ ॥
तन का तो आसन जमा मनके कटे न पांख ।
वगुला तो ध्यानी बना पर मछली पर आंख ॥ १५६ ॥
जो सेवापथ में बढ़ा जिसके मन ईमान ।
सत्पथ में ले जाय जो वह है सुगुरु महान ॥ १२७ ॥
स्वार्थ की न हो मुख्यता करे स्वपर–उपकार ।
वह सद्गुरु करता नहीं गुरुता का व्यापार ॥ १२८ ॥
धन आदर या कीर्ति की जिसे नहीं पर्वाह ।
वही सुगुरु जिसके हृदय है जनहित की चाह ॥ १२९ ॥
गुरुता के लक्षण नहीं आडम्बर या वेष ।
दम्भ ढोंग, आये जहां गुरुता वची न शेष ॥ १३० ॥
गुरुता के लक्षण नहीं भक्ति–रसीले वोल ।
नृत्य गीत या वांसुरी वीन खंजरी ढोल ॥ १३१ ॥
जीवन में उतरे नहीं दिये हुए व्याख्यान ।
गुरुता वहां न आसकी फोनोग्राफ समान ॥ १३२ ॥

सत्येश्वर गीता

साधुवेष में हैं छिपे गुरु योगी अवधूत ।
मान प्रतिष्ठा धन ठगें सव पापों के दूत ॥
लालच में आओ नहीं रखो ज्ञान ईमान ।
तुम न वनो हैवान तो वे न वनें शैतान ॥
धन यश जन होते नहीं सद्गुरु की पहिचान ।
सद्गुरु सच्चा वैद्य है लिये ज्ञान ईमान ॥

सत्यभक्त साहित्य

धर्म और समाज

सत्यामृत (दृष्टिकांड)	५ रु.
,, (आचारकांड)	५ रु.
❁ ,, (व्यवहार कांड)	१० रु.
जीवनसूत्र	०)७५
सत्यसूक्त	०–७५
❁ ईमान	१ रु.
❁ सूरजप्रश्न	१ रु.
धर्मसमभाव	०)७५
विवाह पद्धति	०)४०
सुखशान्तिमय संसार	)१०
कैसा धर्म चाहिये	)१५
मूल्य बदलो	)८५
साधु शिक्षा	१ रु.
संस्कृति समस्या	१)५०
❁ एकता की समस्या	१ रु.
❁ सुलझी गुत्थियां	१ रु.
❁ सन्तान समस्या	)५०
धर्मसमीक्षा	१)५०
जैन धर्ममीमांसा (१)	२ रु
,, (२)	३ रु.
,, (३)	३ रु.
सन्तपंथ समीक्षा	)७५
आर्यसमाज समीक्षा	)२०
ईसाई बहाई समीक्षा	)५०
जैनों से	)४०
प्रकाश की राह में	१ रु.
❁ कुरान की झांकी	)५०
शास्त्रांधता	)३०
हिन्दु मुसलिम मेल	)२५
मुसलिम भाइयों से	)२५
हिन्दू भाइयों से	)२०
मुसलमानों से	)२०
ईसाई धर्म	)५०
सत्यसमाज	)४०
सत्यसमाजी जीवन	)२०
सत्यसमाजी क्यों बनें	)३५
अनमोल पत्र	)४५
सत्यार प्रार्थना	)५०
सत्यदर्शन	१)५०
युगसन्देश	)४५
❁ सत्यसमाज की विशेषताएं	)२०

कथा, डायरी, यात्रा,

सुख की खोज	१)२५
❁ अग्निपरीक्षा	१ रु.
नरक स्वर्ग के चित्र	३ रु.
गुरुदेव का शिक्षणालय	२)२५
गागर में सागर	)७५
❁ चतुर महावीर	१ रु.
❁ महात्मा राम	)३०
मन्दिर का चबूतरा	)७५
❁ क्यों सलाम करूं	)२५
❁ नागयज्ञ (नाटक)	१)५०
नया संसार	२ रु.
महावीर का अन्तस्तल	४ रु.
सत्यलोक यात्रा	१)५०
वृद्ध हृदय 'छपरहा है'	१)५०
क्या ईश्वर खुशामदखोर है ?	–४०

ख्याति लाभ के ही लिये कष्ट सहें जो लोग ।
उन छलियों के ढोंग से करो नहीं सहयोग ॥ १४६ ॥
धूर्त लोग गुरुवेष में बने रंक से राव ।
वे संसार समुद्र में हैं पत्थर की नाव ॥ १५३ ॥
तन का तो आसन जमा मनके कटे न पांख ।
वगुला तो ध्यानी वना पर मछली पर आंख ॥ १५६ ॥
जो सेवापथ में वढ़ा जिसके मन ईमान ।
सत्पथ में ले जाय जो वह है सुगुरु महान ॥ १२७ ॥
स्वार्थ की न हो मुख्यता करे स्वपर–उपकार ।
वह सद्गुरु करता नहीं गुरुता का व्यापार ॥ १२८ ॥
धन आदर या कीर्ति की जिसे नहीं पर्वाह ।
वही सुगुरु जिसके हृदय है जनहित की चाह ॥ १२९ ॥
गुरुता के लक्षण नहीं आडम्बर या वेष ।
दम्भ ढोंग आये जहां गुरुता वची न शेष ॥ १३० ॥
गुरुता के लक्षण नहीं भक्ति–रसीले बोल ।
नृत्य गीत या बांसुरी वीन खंजरी ढोल ॥ १३१ ॥
जीवन में उतरे नहीं दिये हुए व्याख्यान ।
गुरुता वहां न आसकी फोनोग्राफ समान ॥ १३२ ॥

सत्येश्वर गीता

साधुवेष में हैं छिपे गुरु योगी अवधूत ।
मान प्रतिष्ठा धन ठगें सब पापों के दूत ॥
लालच में आओ नहीं रखो ज्ञान ईमान ।
तुम न बनो हैवान तो वे न बनें शैतान ॥
धन यश जन होते नहीं सद्गुरु की पहिचान ।
सद्गुरु सच्चा वैद्य है लिये ज्ञान ईमान ॥

सत्यभक्त साहित्य

धर्म और समाज

सत्यामृत (दृष्टिकांड)	५ रु.
,, (आचारकांड)	५ रु.
❁ ,, (व्यवहार कांड)	१० रु.
जीवनसूत्र	०)७५
सत्यसूक्त	०—७५
❁ ईमान	१ रु.
❁ सूरजप्रश्न	१ रु.
धर्मसमभाव	०)७५
विवाह पद्धति	०)४०
सुखशान्तिमय संसार	)१०
कैसा धर्म चाहिये	)१५
मूल्य बदलो	)८५
साधु शिक्षा	१ रु.
संस्कृति समस्या	१)५०
❁ एकता की समस्या	१ रु.
❁ सुलझी गुत्थियां	१ रु.
❁ सन्तान समस्या	)५०
धर्मसमीक्षा	१)५०
जैन धर्ममीमांसा (१)	२ रु
,, (२)	३ रु.
,, (३)	३ रु.
सन्तपंथ समीक्षा	)७५
आर्यसमाज समीक्षा	)२०
ईसाई बहाई समीक्षा	)५०
जैनों से	)४०
प्रकाश की राह में	१ रु.
❁ कुरान की झांकी	)५०
शास्त्रांधता	)३०
हिन्दु मुसलिम मेल	)२५
मुसलिम भाइयों से	)२५
हिन्दू भाइयों से	)२०
मुसलमानों से	)२०
ईसाई धर्म	)५०
सत्यसमाज	)४०
सत्यसमाजी जीवन	)२०
सत्यसमाजी क्यों बनें	)३५
अनमोल पत्र	)४५
सत्यार प्रार्थना	)५०
सत्यदर्शन	१)५०
युगसन्देश	)४५
❁ सत्यसमाज की विशेषताएं	)२०

कथा, डायरी, यात्रा,

सुख की खोज	१)२५
❁ अग्निपरीक्षा	१ रु.
नरक स्वर्ग के चित्र	३ रु.
गुरुदेव का शिक्षणालय	२)२५
गागर में सागर	)७५
❁ चतुर महावीर	१ रु.
❁ महात्मा राम	)३०
मन्दिर का चबूतरा	)७५
❁ क्यों सलाम करूं	)२५
❁ नागयज्ञ (नाटक)	१)५०
नया संसार	२ रु.
महावीर का अन्तस्तल	४ रु.
सत्यलोक यात्रा	१)५०
बुद्ध हृदय 'छपरहा है'	१)५०
क्या ईश्वर खुशामदखोर है ?	—४०

शीलवती —२०
नई दुनिया का नया समाज —४०
मेरी आफ्रिका यात्रा ४ रु.
आत्मकथा २ रु.
इन्द्रधनुष १—२५
अवधूत की डायरी २—५०
❁ क्या संसार दुःखमय है —२५

राजनीति अर्थशास्त्र

राजनीति समस्या १ रु.
मार्क्सवाद मीमांसा १—५०
निरतिवादी अर्थशास्त्र २ रु.
निरतिवाद —७५
सुराज्य की राह —२०
राजभाषा समस्या —३०
शासन सुधार —४०
मानवराष्ट्र —२०
❁ मानवराष्ट्र क्यों और कैसे —२०
दलातीत सरकार —१५
विश्वशान्ति का अमोघ उपाय —४५
स्वराज्य कैसा —३५ सत्यसंघ —२५
एक वर्ष में स्वराज्य —३५
सत्ययुग आया —४०
शासन क्रान्ति १ रु

विज्ञान, भाषा, इतिहास

मानवभाषा (नयी भाषा) २
मानवभाषा वनाम एस्पेरेन्टो —४
„ (अंग्रेजी में) २ रु.
❁ लिपिसमस्या —४०
इतिहास शुद्धि की प्रस्तावना —३०
उपकारी विज्ञान —२०
विश्वरचना १ रु.

काव्यगीत

दिव्यदर्शन (महाकाव्य) ३ रु.
सत्येश्वर गीता ४ रु.
❁ कृष्ण गीता २ रु.
जातिभेद निःसार —२५
सत्यनारायण कथा —३५
पैगम्बर गीत १—५०
❁ वन्दना —७५
❁ बोधगीत —६०
भावगीत —६०
गीतावलि —५०
सच्चे नारे —४०
कव्वालियां —२५

जिन पुस्तकों पर ❁ यह निशान लगा है वे पुस्तकें स्टाक में नहीं है।

अन्य भाषाओं में सत्यसाहित्य

वर्मी, तेलगु, नेपाली में— वुद्ध हृदय। कनड़ी में— नागयज्ञ, तरला। गुजराती में— मन्दिरनो चबूतरो, सत्यसमाज। मराठी में— बिन्दूत सिन्धू। अंग्रेजी में स्वामी सत्यभक्त, मानवभाषा वर्सेस एस्पेरेन्टो, मेनीफेस्टो। बंगाली में— सत्यसमाज, सत्यार परिचय, जीवन सूत्र, नामकीर्तनेर मर्यादा।

मासिक पत्र संगम, वार्षिक मूल्य ५ रु.

पता— संगम प्रकाशन, सत्याश्रम वोरगांव, वर्धा. महाराष्ट्र)

कोई न कोई पाप करेगा इसलिये हमें करना चाहिये यह तो ऐसा ही है कि कोई न कोई विष पियेगा इसलिये हमें पीलेना चाहिये । जो पियेगा वह मरेगा, आप पियेंगे आप मरेंगे। विष पीकर मौत से कैसे बच सकते हैं ! जो दम्भ से, पाखंड से, सत्ता और शक्ति से दुनिया को सताता है, गुमराह करता है और सोचता है कि उसके दंड से मैं बच जाऊंगा वह ईश्वर पर विश्वास करनेवाला नहीं कहा जासकता ।

मैं– तो क्या सत्य की अप्रतिष्ठा और असत्य की प्रतिष्ठा देखकर, दुनिया के मोह और अहंकार को उत्तेजित कर उन्हें ठगकर सत्ता वैभव प्रतिष्ठा के शिखर पर लोगों को चढ़ता देखकर, हमें चुप रहजाना चाहिये ।

वे– कदापि नहीं, उनका डटकर विरोध करना चाहिये। पर ठगों की जाति में मिलजाना ठगों का विरोध करना नहीं है।

मैं– उनकी बातों से प्रभावित हो चुका था। फिरभी स्पष्ट स्वीकार न कर सका। यही कहा कि आपकी बातें विचारणीय हैं । मैं जरूर उन पर विचार करूंगा ।

मुझे धन्यवाद देकर वे चले गये ।

४५– पटाक्षेप

सत्यस्नेही की बातों का स्मरण कर मैं रातभर विचार करता रहा । उनकी यह बात मुझे बार बार उद्विग्न करती रही कि ठगों की जाति में मिलजाना ठगों का विरोध करना नहीं है । मैं महाठग बना । यह ठगों का विरोध नहीं था। निपट स्वार्थ परता थी । आत्मरक्षा के नाम पर जगत का

कोई न कोई पाप करेगा इसलिये हमें करना चाहिये यह तो ऐसा ही है कि कोई न कोई विष पियेगा इसलिये हमें पीलेना चाहिये । जो पियेगा वह मरेगा, आप पियेंगे आप मरेंगे। विष पीकर मौत से कैसे वच सकते हैं ! जो दम्भ से, पाखंड से, सत्ता और शक्ति से दुनिया को सताता है, गुमराह करता है और सोचता है कि उसके दंड से मैं वच जाउंगा वह ईश्वर पर विश्वास करनेवाला नहीं कहा जासकता ।

मैं– तो क्या सत्य की अप्रतिष्ठा और असत्य की प्रतिष्ठा देखकर, दुनिया के मोह और अहंकार को उत्तेजित कर उन्हें ठगकर सत्ता वैभव प्रतिष्ठा के शिखर पर लोगों को चढ़ता देखकर, हमें चुप रहजाना चाहिये ।

वे– कदापि नहीं, उनका डटकर विरोध करना चाहिये। पर ठगों की जाति में मिलजाना ठगों का विरोध करना नहीं है।

मैं– उनकी वातों से प्रभावित हो चुका था । फिरभी स्पष्ट स्वीकार न कर सका । यही कहा कि आपकी वातें विचारणीय हैं । मैं जरूर उन पर विचार करूंगा ।

मुझे धन्यवाद देकर वे चले गये ।

४५– पटाक्षेप

सत्यस्नेही की वातों का स्मरण कर मैं रातभर विचार करता रहा । उनकी यह वात मुझे वार वार उद्विग्न करती रही कि ठगों की जाति में मिलजाना ठगों का विरोध करना नहीं है । मैं महाठग वना । यह ठगों का विरोध नहीं था। निपट स्वार्थ परता थी । आत्मरक्षा के नाम पर जगत का

विनाश था । देखना है कि इसका प्रायश्चित्त कैसे होता है।

पर प्रायश्चित्त का अवसर नहीं आया । मुझे दंड ही मिलगया । पुलिस ने संस्थान को चारों तरफ से घेर लिया। मन्दिर के तलघर में ट्रान्समीटर और सारे यंत्र पकड़े गये। लाशों के कंकाल भी मिले। और मैं जेल में भेज दिया गया। इस समय रुक्मिणी ने भी साथ छोड़ दिया है । जो स्वाभाविक है। विपत्ति में, खासकर पाप का दंड भोगते समय कौन किसका साथ देता है। पर मैं अपनी भूल का अनुभव कर रहा हूं इसलिये जो भी दंड मिलेगा मैं उसे प्रायश्चित्त ही समझकर भोगूंगा। सम्भवतः यह मेरी लीलाओं पर ही नहीं मेरे जीवन पर भी पटाक्षेप है । – मायाराम

गुरु परीक्षा

बिछा हुआ है जगत में कुगुरु जनों का जाल ।
उसे तोड़ने के लिये ले विवेक करवाल ॥ १५७ ॥
जादू टोना देखके यदि गुरुता का ताज ।
तो जादूगर जगत के कहलायें गुरुराज ॥ १३८ ॥
चमत्कार को देख यदि हो गुरुता का भान ।
तो गुरुता का मूल हो यह भौतिक विज्ञान ॥ १३९ ।
वैज्ञानिक के सामने क्या हैं भूत पिशाच ।
कण कण में होता यहां महाभूत का नाच ॥ १४० ।
मंत्र तंत्र से है नहीं गुरुता का कुछ मेल ।
वैज्ञानिक के सामने ये बच्चों के खेल ॥ १४१ ॥
अगर न सद्गुरु मिलसके तो खुद को गुरु मान ।
भूखा ही रहना भला भला नहीं विषपान ॥ १५८ ॥

कोई न कोई पाप करेगा इसलिये हमें करना चाहिये यह तो ऐसा ही है कि कोई न कोई विष पियेगा इसलिये हमें पीलेना चाहिये । जो पियेगा वह मरेगा, आप पियेंगे आप मरेंगे । विष पीकर मौत से कैसे बच सकते हैं ! जो दम्भ से, पाखंड से, सत्ता और शक्ति से दुनिया को सताता हैं, गुमराह करता है और सोचता है कि उसके दंड से मैं बच जाउंगा वह ईश्वर पर विश्वास करनेवाला नहीं कहा जासकता ।

मैं– तो क्या सत्य की अप्रतिष्ठा और असत्य की प्रतिष्ठा देखकर, दुनिया के मोह और अहंकार को उत्तेजित कर उन्हें ठगकर सत्ता वैभव प्रतिष्ठा के शिखर पर लोगों को चढ़ता देखकर, हमें चुप रहजाना चाहिये ।

वे– कदापि नहीं, उनका डटकर विरोध करना चाहिये । पर ठगों की जाति में मिलजाना ठगों का विरोध करना नहीं है ।

मैं– उनकी बातों से प्रभावित हो चुका था । फिरभी स्पष्ट स्वीकार न कर सका । यही कहा कि आपकी बातें विचारणीय हैं । मैं जरूर उन पर विचार करूंगा ।

मुझे धन्यवाद देकर वे चले गये ।

४५– पटाक्षेप

सत्यस्नेही की बातों का स्मरण कर मैं रातभर विचार करता रहा । उनकी यह बात मुझे बार बार उद्विग्न करती रही कि ठगों की जाति में मिलजाना ठगों का विरोध करना नहीं है । मैं महाठग बना । यह ठगों का विरोध नहीं था । निपट स्वार्थ परता थी । आत्मरक्षा के नाम पर जगत का